रामन् लोक कला केन्द्र

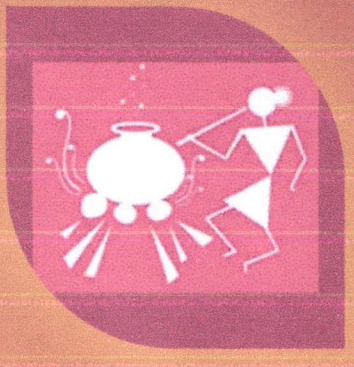

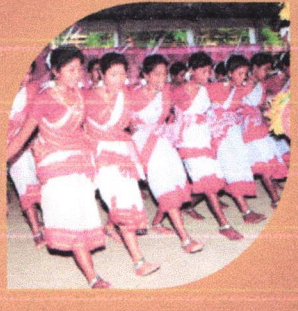

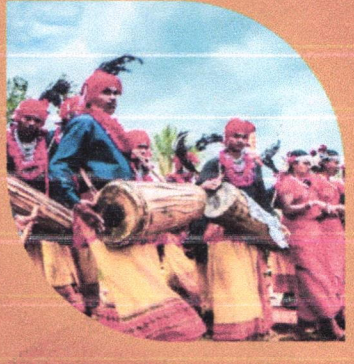

DR. C.V. RAMAN UNIVERSITY

Chhattisgarh, Bilaspur | AN AISECT GROUP UNIVERSITY

Approved by : PCI | AICTE | NCTE | BCI | Member of : AIU | Recognized by : UGC | A NAAC Accredited University

Registrar

छत्तीसगढ़ी कला केंद्र

प्रस्तावना

डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय छ.ग. निजी विश्वविद्यालय का (स्थापना एवं संचालन) अधिनियम 2005 के प्रावधानों के अनुसार बिलासपुर जिला के दुरस्थ ग्रामीण वनचंल ग्राम कोटा में 3 नवम्बर 2006 को की गई। विश्वविद्यालय के स्थापना के समय से ही आसपास के ग्रामीण दूरस्थ अंचलों के विद्यार्थियों में विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा एवं संचार तकनीक से युवाओं को जोड़ने के लिए कार्य करती आ रही है। विश्वविद्यालय को गुणवता, स्वच्छता एवं गुणवतापूर्ण शिक्षा के लिए अनेक राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हो चुके है। साथ ही साथ विश्वविद्यालय में तकनीकी शिक्षा एवं दूरस्थ शिक्षा संचालन हेतु तथा प्रवेशित विद्यार्थियों को सार्वधिक रोजगार प्रदान करने के लिए भी पुरस्कृत किया जा चुका है। विश्वविद्यालय NIRF में भी रैंकिग प्राप्त कर चुकी हैं एवं NAAC द्वारा B+ ग्रेड प्रत्यायित किया गया है। विश्वविद्यालय अपने उत्कृष्ट अधोसंरचना एवं उच्च स्तरीय पुस्तकालय के लिए मध्य भारत में जाना जाता है, विश्वविद्यालय में केन्द्र एवं राज्य सरकार के योजनाओं के अनुरूप विद्यार्थियों के कौशल विकास के लिए प्रधानमंत्री कौशल केन्द्र, दीनदयाल उपाध्याय कौशल विकास केन्द्र एवं अनेक उत्कृष्टता केन्द्र स्थापित किये गये है। विश्वविद्यालय में भाषा की शिक्षा हेतु लैंगवेज लेब की व्यवस्था की गई है। आत्मनिर्भर भारत, समग्र भारत हेतु रमन् इनिक्वेशन सेन्टर स्थापित किये गये हैं। अपने विद्यार्थियों को कलात्मक एवं रचनात्मक अभिव्यक्ति तथा आसपास के गाँवों में विभिन्न सामाजिक मुद्दों पर जागरूकता लाने लोककला, लोककला संस्कृति के संरक्षण एवं संर्वधन तथा लोक कलाकारों को मंच प्रदान करने के लिए समुदायिक रेडियो (रेडियो रामन् 90.4) की स्थापना गई है। ग्रामीण प्राद्यौगिकी विभाग के माध्यम से विद्यार्थियों एवं क्षेत्र के युवाओं को ग्रामीण तकनीकी से जोड़ते हुए रोजगार स्वरोजगार के लिए उन्मुख किया जा रहा है।

विश्वविद्यालय अपने स्थापना काल से ही छत्तीसगढ़ के उत्कृष्ठ पंरपरा लोककला एवं संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन एवं इससे अपने विद्यार्थियों एवं प्रदेश के युवा पीढ़ी को जोड़ने के लिये संकल्पित है। विलुप्त होती कला एवं संस्कृति को मंच प्रदान करने तथा इसे शिक्षा से जोड़ने के लिए विश्वविद्यालय सतत् प्रयत्नशील रहा है। सन् 2010 में कला संकाय का स्थापना कर क्षेत्र के कला एवं पुरातातविक संपदा से विद्यार्थियों को अवगत कराने के लिए इतिहास, समाजशास्त्र, हिन्दी, छत्तीसगढ़ी, प्राच्यभाषा विभाग आदि में स्नातक एवं स्नातकोत्तर की कक्षा प्रारंभ की। विश्वविद्यालय में प्रतिवर्ष होने वाले कुल उत्सव में विद्यार्थियों के कलात्मक रूझान एवं लोककला के प्रति उनके जुड़ाव को देखते हुए विश्वविद्यालय ने छत्तीसगढ़ लोककला एवं संस्कृति केन्द्र स्थापित किया गया।

रविन्द्रनाथ टैगोर अन्तर्राष्ट्रीय कला एवं संस्कृति केन्द्र की स्थापना की गई नवम्बर माह को छत्तीसगढ़ लोककला उत्सव हेतु निर्धारित किया गया जो की प्रदेश एवं विश्वविद्यालय की स्थापना माह है। विश्वविद्यालय में छत्तीसगढ़ी भाषा को जन–जन की भाषा से प्रशासनिक भाषा एवं राजभाषा बनाने के लिए एवं छत्तीसगढ़ी भाषा में शोध एवं सृजनशीलता को बढ़ावा देने के लिए छत्तीसगढ़ी शोध एवं सृजनपीठ तथा अनेक साहित्यिक गतिविधि हेतु वनमाली सृजनपीठ की स्थापना की गई। कला एवं संस्कृति की शिक्षा हेतु ललित कला विभाग एवं रायगढ़ कत्थक केन्द्र की स्थापना की गई।

प्रदेश के युवापीढ़ी एवं विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों में छत्तीसगढ़ी लोककला एवं संस्कृति के प्रति रूझान तो है, परन्तु युवापीढ़ी में छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक प्रतीकों कला–संस्कृति एवं परम्पराओं की जानकारी के अभावों को देखते हुए विश्वविद्यालय परिसर विद्यार्थियों के शोध एवं सृजनशीलता को बढ़ावा देने के लिए लोककला केन्द्र जिसमें की छत्तीसगढ़ की सभी लोक कलाओं, लोक संस्कृति, लोक संगीत, लोक परम्पराओं जानकारी प्रदर्शित / स्थापना की गई है। विश्वविद्यालय परिसर में छत्तीसगढ़ की कला संस्कृति एवं छत्तीसगढ़ी जीवन शैली के प्रतीक चिन्हों को संरक्षित करने तथा इससे भावी पीढ़ी को जोड़ने के उद्देश्य से छत्तीसगढ़ी संजोही की स्थापना की गई। संजोही में विद्यार्थियों द्वारा अपने लोककला एवं संस्कृति के विरासत तथा छत्तीसगढ़ी जीवन के प्रतीक चिन्हों को संकलित करने में विद्यार्थियों की भूमिका उल्लेखनीय रही। वर्तमान में विश्वविद्यालय का छत्तीसगढ़ी कला केन्द्र एवं छत्तीसगढ़ी संजोही शोध एवं प्रतियोगी परीक्षा के लिए तैयारी कर रहे विद्यार्थियों के लिये उत्कृष्टता केन्द्र के रूप में कार्य कर रहा है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

उद्देश्य

लोककला एवं संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु युवाओं को उपलब्ध अवसरों से जोड़ते हुए लोककला एवं संस्कृति को नई पीढ़ी के मूल रूप में हस्तांतरित करना। छत्तीसगढ़ लोककला एवं संस्कृति केन्द्र के माध्यम से अंचल के कला एवं संस्कृति का संरक्षण एवं संर्वधन का प्रयास करते हुये इसे तकनीक के माध्यम से सुदीर्घ बनाना तथा नवोदीत पीढ़ी को इसे मूल रूप से हस्तांतरित करने हेतु प्रयास करते हुये राष्ट्रीय एवं अंर्तराष्ट्रीय स्तर व्यापक बनाने का प्रयास करना।

दूरदर्शिता

लोककला एवं संस्कृति केन्द्र आधुनिक तकनीकी का उपयोग करते हुये केन्द्र को एक लोककला एवं संस्कृति के क्षेत्र में ज्ञान केन्द्र के रूप में विकसित कर स्थानीय समाज को जोड़ते हुये युवाओं को अवसर प्रदान करना। वैश्विक स्तर पर छत्तीसगढ़ लोक संस्कृति को सुदृढ़ बनाने तथा इसके विकास , प्रचार एवं प्रसार के साथ संस्कृति संवर्धन करते हुये स्थानीय लोक कलाकारों एवं साहित्यकारों की आजीविका की स्थिति में सुधार के लिये बेहतर अवसर प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। स्थानीय सांस्कृतिक रूपों के प्रति गहन जागरूकता पैदा करना। छत्तीसगढ़ लोककला एवं संस्कृति केन्द्र की स्थापना छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति एवं कलाओं को संरक्षित रखने एवं उसे अकादमिक का विषय बनाने की दृष्टि से की गई है। इसके अंतर्गत लोक साहित्य , लोक संस्कृति एवं लोक कला के विविध आयामों , विविध रूपों एवं पांडुलिपियों को डिजिटल फार्म में संरक्षित कर इन संस्कृतियों को राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तर पर पहचान दिलाने का प्रयास किया जाना। लोक कलाकारों एवं साहित्यकारों को भी विश्वविद्यालय इस केन्द्र के माध्यम से मंच उपलब्ध करवाकर इन संस्कृतियों के संवर्धन का प्रयास करना। यह केन्द्र अकामिक अध्येताओं और छत्तीसगढ़ के लोक संस्कृति के बीच सेतु के रूप में कार्य करेगा। अपने विद्यार्थियों तथा क्षेत्र के युवा पीढ़ी को प्रदेश में लोक कला संस्कृति के समृद्ध विरासत से अवगत करना है। यह केन्द्र प्रतिस्पर्धी परीक्षा के तैयारी हेतु ज्ञान केन्द्र के रूप में कार्य करेगा।

विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए उत्कृष्टता केंद्र

डॉ.सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के सर्वांगिण विकास के लिए केंद्रों की स्थापना की गई है। जो निम्नानुसार हैः–

- रामन सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन
- सेंटर फॉर बायोटेक्नालॉजी रिसर्च
- सेंटर फॉर छत्तीगढ़ी लोक कला, संस्कृति एवं साहित्य
- सेंटर ऑफ एक्सीलेंस फॉर रूरल टेक्नोलॉजी एंड एंटरप्रेन्योरशिप डेवलपमेंट
- सेंटर फॉर रिनिवेबल ग्रीन एनर्जी
- सेंटर फॉर परफार्मिंग आर्ट्स एंड रायगढ़ कला कथक
- सेंटर फॉर फ्यूचर स्किल एकेडमी
- सेंटर फॉर रिमार्ट सेसिंग एंड जीआईएफ
- सेंटर फॉर इंक्यूबेशन एंड स्टार्टअप
- सेंटर फॉर एक्सीलेंस फॉर एडवांस एनवारमेंटल रिसर्च
- छत्तीसगढ़ी शोध एवं सृजन पीठ
- रविन्द्रनाथ टैगोर लोककला केंद्र
- वनमाली सृजन पीठ

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

छत्तीसगढ़ मिट्टी कला (टिराकोटा कला)

पृष्ठभूमिः

भारत में मिट्टी के बर्तन मेहरगढ़ काल संख्या 2 से शुरू हुआ जिसका तिथि 5,500 ईसा पूर्व से लेकर 4,800 ईसा पूर्व है। सिन्धु सभ्यता के उदय के बाद भारत में मिट्टी के समग्री बनाने की परंपरा में एक क्रान्ति सी आ गई, और यहाँ से अनेकों प्रकार के मिट्टी के बर्तनों एवं अन्य सामग्री का विकास होना शुरू हुआ, तथा इस काल में बर्तनों को रंगने तथा उन पर कलाकृतियाँ बनायी जाने लगी थी। मिट्टी कला मनुष्य के विकास काल से लेकर आज तक किसी ना किसी रूप में हमारे साथ रही है जिसकी गरिमा हमे आज भी मोहनजोदाडो, हड्डप्पा, तथा नालंदा की खुदाई से प्राप्त मिट्टी पात्र एवं अवशेषों के रूप में मिलते हैं।

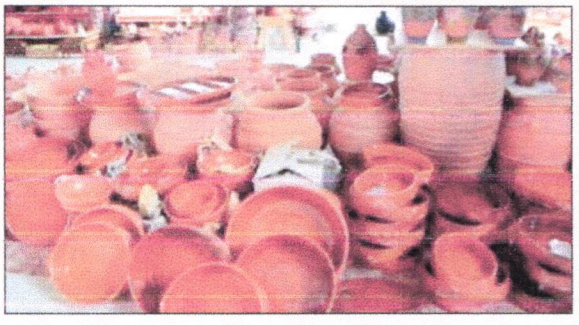

छत्तीसगढ़ राज्य के संदर्भ में :

छत्तीसगढ़ राज्य कला के क्षेत्र में संमृद्व रहा है। आज प्रदेश के हर जिले ही नहीं, बल्कि सभी राज्यों में एवं भारत में छत्तीसगढ़ की माटी कला विशेष स्थान रखती है। पक्की मिट्टी के बर्तन अपनी भौतिक आकृति से कहीं अधिक गहरे अर्थ में छत्तीसगढ़ के जनजाति लोगों द्वारा तैयार किए जाने वाले सभी प्रकार के हस्तशिल्पों की परम्परा का बखान करते हैं। पक्की मिट्टी की शिल्पकृतियां तैयार करने के लिए जरूरी विशेषज्ञता और निपुणता कुम्हार समुदाय की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचती रही है। कुम्हार सुन्दर–सुन्दर मटका, हंडिया, दीये, सुराही, चुकिया, लोटा, गिलास, कटोरी, ढ़कना, कुवड़िया, मरकीए करवा, खपरा, कलश सहित कई रोजमर्रा के उपयोग का सामान गढ़ते हैं। सुराही और विक लैम्प बनाने में स्वदेशी प्रौद्योगिकी का वृहत परिष्कृत रूप और निपुणता झलकती है। आधुनिक जीवन की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए पेन होल्डर, लैम्प और पेपरवेट आदि जैसी समकालीन वस्तुएं भी बनाई जाती हैं। खासबात यह है, कि इन सभी सामानों में छत्तीसगढ़ संस्कृति और परंपरा की झलक दिखाई पड़ती है। प्रदेश के हर त्यौहारों में मिट्टी बने सामानों का उपयोग होता है, इसलिए हर छत्तीसगढ़ी जनजीवन, संस्कृति एवं पर्व में भी माटी के सामानों का अपना विशेष स्थान हैं। बच्चे के जन्म संस्कार से लेकर मृत्यु के उपरान्त तक सभी संस्कारों में मिट्टी के सामान प्रयोग में लाये जातें हैं। छत्तीसगढ़ राज्य में बस्तर की मिट्टी शिल्प अपनी विशेष पहचान रखता है। इसके अलावा रायगढ़, सरगुजा, राजनांदगांव व अन्य स्थान भी मिट्टी शिल्प अपनी अपनी निजी विशेषताओं के कारण महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

आवश्यक कच्चामाल एवं सामग्री विवरणः–

आवश्यक कच्चेमाल के रूप में उपयोग की जाने वाली मिट्टी है, प्रमुख रूप से कन्हार, मटासी , काली, एवं लाल मिट्टी जो चिकनी एवं मुलायम होती है। लाल मिट्टी का उपयोग मुख्यरूप से दिए बनाने एवं मटासी मिट्टी का उपयोग मूर्तियाँ एवं प्रतिमा बनाने में किया जाता है। सर्वोत्तम मिट्टी का स्त्रोत महानदी, इन्द्रावती, खारुन, अरपा नदी है। नदी के उपरी भाग की मिट्टी का उपयोग प्रमुख रूप से किया जाता है।

आवश्यक सामग्री :– लकड़ी पीटना, कटनी (सूत), कमोटी, पोतिया चाक एवं लकड़ी के बने स्पुतला।

बनाने की तकनीक एवं प्रक्रियाः–

नदी के ऊपरी भाग के मिटटी को लाकर सर्वप्रथम उसे अच्छी तरह से पीस कर एवं लगभग पंद्रह दिवस तक अच्छी तरह से भीगोकर उसमे राख एवं महीन बालू करके सघते है, फिर उन्हें छोटे–छोटे मिट्टी के लोंदे बनाये जाते है, तत्पश्चात् मिट्टी के लोंदे को चाक पर रखकर उसे लकड़ी के स्पुतला से गोल गोल घुमाकर आकृति प्रदान की जाती है, उसके बाद उन आकृतियों को धुप में सुखाया जाता है, अच्छी तरह से सुख जाने के बाद इन्हें धीमी आंचो में कई घंटे तक पकाने से इन कलाकृतियों में मजबूती आ जाती है, अंत में इन कलाकृतियों में सुंदर सा गेरुवा रंग चढ़ाया जाता है।

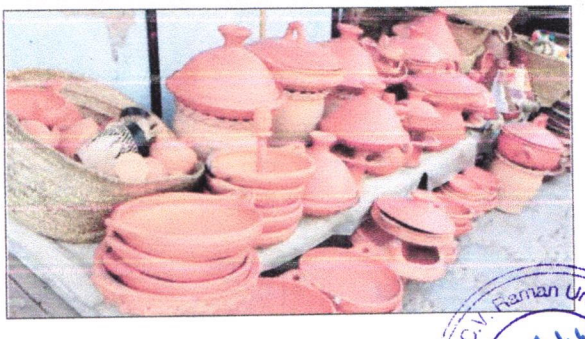

Dr. C.V. Raman University ★ Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) ★ Registrar

मिट्टी कला के बदलते स्वरूपः

टेराकोटा कला या मृदाशिल्प वे शिल्प होते हैं जिनमें मिट्टी को पकाकर बर्तनों अथवा मूर्तियों का निर्माण किया जाता है, मिट्टी की इस कला को विश्व की प्राचीनतम कला में से एक माना जाता है जिससे आज भी बस्तर में जीवंत रखा गया है इसमें अधिकांशतः बाघ , बैल , हाथी , घोड़ा एवं बेन्द्री आकृतियां बनाई जाती हैं। इनका मुख्य उपयोग आदिवासी जीवन के अनुष्ठानों, भावनाओं के प्रतीक एवं रीति रिवाज के प्रतिनिधित्व के रूप में किया जाता है यह कलाकृति व आकृति अत्यंत मनमोहक होती है।

कई अन्य राज्यों की तरह, छत्तीसगढ़ द्वारा बनाए गए हस्तशिल्प में टेराकोटा को जगह मिली है। टेराकोटा मिट्टी के बर्तन राज्य में आदिवासी जीवन के रीति–रिवाजों का प्रतिनिधित्व करते हैं और उनकी भावनाओं का प्रतीक हैं। मिट्टी के बर्तन बनाने वालों को अक्सर कुम्हार के नाम से सम्बोधित किया जाता है। छत्तीसगढ़ निवासियों द्वारा मिट्टी से पशु–पक्षी खिलौने, मूर्तियों आदि को मिट्टी शिल्प के नाम से जाना जाता है। बस्तर में मिट्टी शिल्प प्रसिद्ध है, जिसे 'टेराकोटा' (Terracotta) कहते है। इसके अतिरिक्त रायगढ़, सरगुजा व राजनांदगांव भी मिट्टी शिल्प कला के लिए प्रसिद्ध है।

सनी हुवी मिट्टी

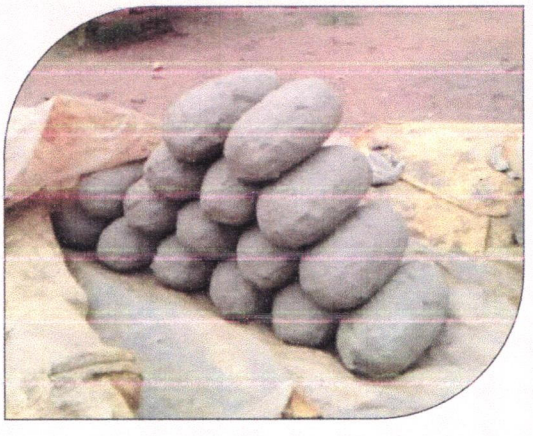

चाक पर बर्तन बनाने के लिए
बनाये गए मिट्टी के लोंदें

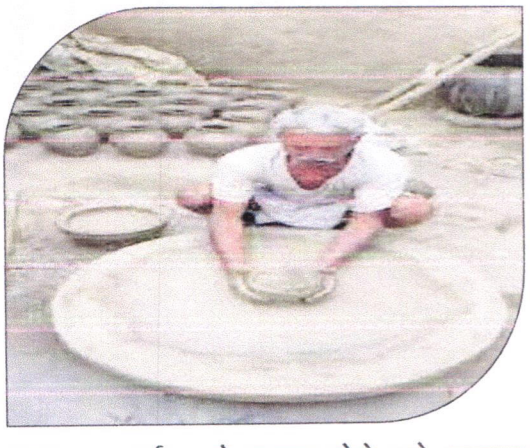

चाक पर बर्तन को स्वरुप देते हुवे कुम्हार

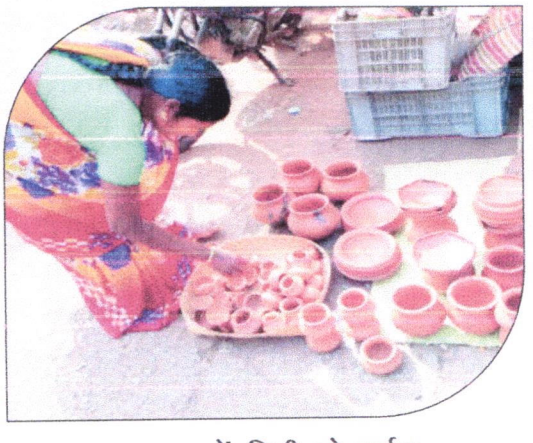

बाजार में मिट्टी के बर्तन
विक्रय करते हुवे कुम्हार

Registrar
Dr. ★ Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) ★

गोदना कला

पृष्ठभूमिः

गोदना कला सिर्फ भारत के जनजातीय लोक समुदाय में ही प्रचलित नही है वरण यह विश्व के सभी जनजातीय एवं अन्य समुदायों में भी व्यापक रूप से प्रचलित है। तथा जनजातीय लोक संस्कृति में गोदना कला का महत्व अत्यंत व्यापक है। धार्मिक विश्वासों से ऊपजी यह कला और इसके स्वरूप, मान्यताएँ आज भी समाज में प्रचलित है। जो इस समाज में गोदना कला के संरचनात्मक–प्रकार्यवाद के महत्व को प्रदर्शित करता है। वर्तमान में मशीनीकरण, समाजीकरण, संस्कृतिकरण और परसंस्कृतिकरण के कारण इनके गोदना कला के स्वरूप एवं मान्यताओं में परिवर्तन आया है और साथ ही गोदना गुदवाने की क्रिया में भी विघटन हुआ है। आधुनिक समाज में गोदना का स्वरूप टैटू (tatoo) के रूप में हो गया है।

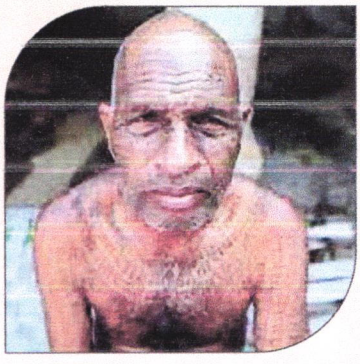

छत्तीसगढ़ के संदर्भ में:

छत्तीसगढ़ की परंपराओं में देहालेखन की एक समृद्ध परंपरा है, इन परंपराओं का अंतर्भाव है। गोदना गुदवाना, माहुर, मेंहदी, बिंदी, सिंदूर आदि लगाना देहालेखन की परंपराओं में दिखाई देता है। छत्तीसगढ़ में कुल जनसंख्या का एक तिहाई भाग जनजातीय जनसंख्या है। यहां बस्तर और सरगुजा जनजातीय बहुल अंचल हैं। गोदना प्रथा बस्तर, सरगुजा, कांकेर, कर्वधा और जशपुर की जनजातीय संस्कृति से अधिक जुडी हुई है। बस्तर अंचल की अबुझमाडियां दण्डामी माडियां, मुरिया, दोरला, परजा, घुरुवा जनजाति की महिलाओं में गोदना गुदवाने का रिवाज पारम्परिक है। छत्तीसगढ़ में रामनाही समुदाय के लोग अपने शरीर के सभी अंगो में राम नाम का गोदना गुदवाते हैं।

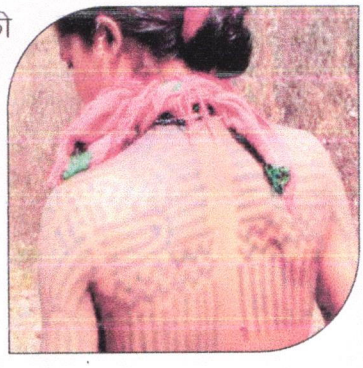

बस्तर, कांकेर के जनजातियों में विवाह पूर्व लड़कियों में श्रृंगार स्वरुप गोदना गुदवाने का रिवाज है। यहां की जनजातीय महिलायें कोहनी में मक्खी, अंगूठा के किनारे खिच्ची, पंजा में खडडू, बांह में बांहचिंघा और छाती में सुता गोदना गुदवाती हैं। छत्तीसगढ़ में गोदना का कार्य समान्यतः देवार एवं कमार जाति में गोदना कला के स्वरूप अत्यंत व्यापक एवं प्राचीन है जो इसके पहचान और सांस्कृतिक विशेषता को प्रदर्शित करता है। कमार जनजाति में गोदना कला ना केवल इसके सांस्कृतिक पहचान है बल्कि इनके पूर्वजों द्वारा मिला एक सांस्कृतिक विरासत है।

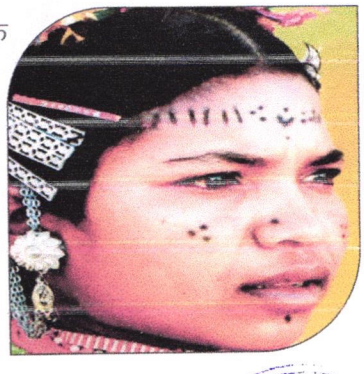

माथे पर गोदना का अंकन आदिकाल से चला आ रहा है। इस गोदने को देखकर जनजातियां की पहचान आसानी से की जा सकती है। इसी तरह हाथ, पैर, जांघ, कोहनी, चुरुवा, सुपली, ठोढी, नाक, कान, गला, अंगूठा, कलाई और पंजा सहित शरीर के प्रत्येक अंगों में गोदना गुदवाये जाते हैं। गोदना गोदने वाली जातियों में अधिकतर महिलायें होती हैं, जो इस कला में निपुण होती हैं। गोदना कला में सबसे अधिक दक्ष जातियाँ वादी, देवार, भाट, कंजर, बंजारा, और मलार हैं।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

गोदना गोदने की विधियाँ :
गोदना गोदने के लिए सुईयों का प्रयोग किया जाता है। सुईयों की संख्या गोदने की आकृति के अनुसार उपयोग में लाई जाती है। कम चौडी गोदना के लिए चार सुईयों का और अधिक चौडी गोदना के लिए छः–सात सुईयों का उपयोग किया जाता है। पहले छेल्का के कांटे को बलोर के रस में डूबोकर शरीर में चुभाकर गोदना गोदा जाता था। केले के पत्ते से बने राख को पानी की सहायता से मिलाकर स्याही का निर्माण किया जाता है। गोदना गोदने वाली महिला को बदनिन कहा जाता है। गोदने गुदाये हुए अंग में हल्दी का लेप लगाया जाता है क्योकि हल्दी का लेप लगाने से दर्द और सूजन कम होता है साथ ही हल्दी लगाने से गोदना में उभार आता है।

वैज्ञानिक महत्व : वैज्ञानिक से गोदना को एक्यूपंचर का रुप मान सकते हैं। सरगुजा अंचल के लोग इस तथ्य को मानते हुए स्वीकार करते हैं कि गोदना से सुंदरता के साथ–साथ वात रोग, चोट का दर्द या फिर अन्य किसी प्रकार के दर्द से राहत मिलती है। गोदना के महत्व को शारीरिक पीड़ा के उपचार से जोड़ते हुये कहा कि घुटने के दर्द में गोदना बनवाया जाए तो घुटने में होने वाले दर्द कम हो जाता है जो गोदना के चिकित्सीय महत्व को भी प्रदर्शित करता है। इसके साथ ही एक मान्यता के अनुसार गोदना ही उसके आभूशण के रूप् में मरनोपरांत उसके साथ स्वर्ग जाता है।

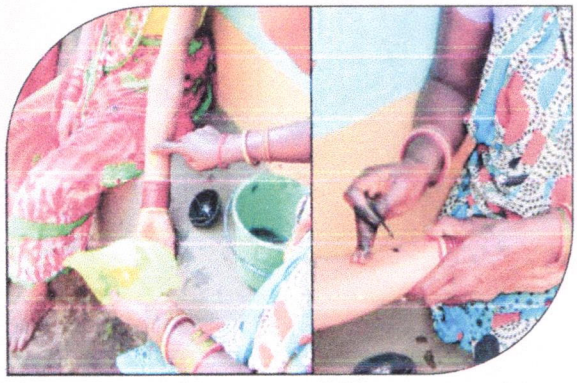

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

छिंद पत्ता कला

पृष्टभूमि :

छिंद (देसी खजूर) भारत के भू भागों में नदियों और नालों के किनारे पाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण पेड़ है, इसे जंगली खजूर, शुगर डेट पाम, टोडी डेट पाम, सिल्वर डेट पाम, इंडियन डेट पाम आदि नामों से भी जाना जाता है। छिंद आदिवासी जीवन का एक अटूट हिस्सा रहा है। जहां इसका फल भूख मिटाता है वहीं इसके पेड़ का रस डिहाइड्रेशन से बचाता है। इसके पत्ते सजावट के काम आते हैं। वानस्पतिक भाषा में इसका नाम फोनिक्स सिल्वेस्ट्रिस है जो एरेकेसी परिवार का सदस्य है।

छत्तीसगढ़ के संदर्भ में :

छत्तीसगढ़ में छिंद का पेड़ सूखे मैदानी भागों, पहाड़ी क्षेत्र एवं नदी-तालाब के उपरी हिस्सों में सामान्यत: रूप से पाया जाता है। छत्तीसगढ़ में छिंद पनारा जाति के लोग पत्तों से अनेक कलात्मक और उपयोगी वस्तुओं का निर्माण करतें है। पारधी (पनारा) जनजाति मूल रूप से एक खानाबदोश शिकारी, खाद्य संग्राहक घुमंतू जनजाति है। इनका मुख्य कार्य शिकार करना है। जीविकोपार्जन के लिए पारधी जनजाति के लोग शिकार करते थे। वर्तमान में शिकार पर प्रतिबंध होने के बाद यह जनजाति मूल रूप से छिंद वृक्ष के पत्तों की शिल्प कला अब इनकी विशिष्ट पहचान बन गयी है। छिंद पत्ता शिल्प के कलाकार मूलत: झाड़ू, सरकी, बिछोना बनाने वाले होते हैं। छिंद के पत्तों से झुनझुना, फिलफिली, चिड़िया, मछली आदि खिलौने बनाए जाते है। साथ ही साथ छिंद पत्ते श्रंगार की वस्तु भी हैं, वे कभी जूडों-खोंपों में लगाये हुए नजर आते हैं, कभी आभूषण या परिधान बने गले अथवा कमर में लटके देखे जा सकते हैं, सरगुजा, रायगढ़, बस्तर, राजनांदगांव, में ये शिल्प देखने को मिलता है।

महाराष्ट्र के इलाके से घूमते-घूमते यह घुमंतू (पारधी)जनजाति जांजगीर-चांपा जिले के अकलतरा विकासखंड के ग्राम बरपाली में जो बरपाली गांव पहुचे व यहां परअपना स्थाई निवास बना लिये हैं, इस समुदाय के लोग आस पास के गांव में भी रहते है। इस जनजाति लोग आपस में मराठी भाषा में बातचीत करते हैं एवं रहन-सहन पहनावा भी मराठी है। प्रमुख रूप से घुमंतू जनजाति के पुरुष नट का कार्य एवं महिला वर्ग भिक्छा एवं छिंद के पत्ते से सरकी, चटाई, झाड़ू टोकनी एवं बच्चों का खिलौना आदि बनाकर अपना जीवन यापन करते है।

बस्तर में छिंद वृक्षों की अधिकता है, इसलिए छिंद को बस्तर का खजूर भी कहा जाता है। छिंदनार, छिंदबहार, छिंदावाड़ा, छिंदपानी ऐसे गांव हैं, जिनका नामकरण वहां छिंद के पेड़ों की अधिकता के चलते हुआ है।

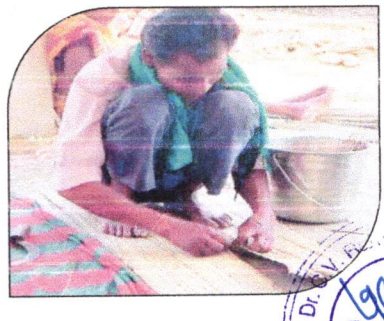

Dr. C.V. Raman University ★ Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) ★ Registrar

बनाने की तकनीक एवं प्रक्रिया :

पारधी लोग पेड़ से परंपरागत तरीके से छिंद के पत्तों को काटकर घर लें आते है। इसके पश्चात एक समान आकार के पत्तियों का चुनाव कर प्रत्येक डाल से पत्तियों को अलग कर लिया जाता है। अलग किए पत्तियों को पुन : बीच से दो भागों में बाँट लिया जाता है। इसके बाद इसे छाया में सुखाया जाता है एवं सूखे पत्तों को अलग अलग कर पत्ते के अग्रभाग में लगे नुकीले कांटों को आग से जला देते है फिर सूखे हुए पत्तों को भिगाकर सरकी, चटाई, बुनाई घर की महिलाएं करती है। बुनाई करके चटाई का निर्माण कर लिया जाता है। बुनाई किए हुए लंबे चटाई को आवश्यकता अनुसार छोटे-छोटे भागों में काट कर, उसके किनारों को पुन : छिंद के पत्तों से बुनाई कर एक चटाई तैयार कर लिया जाता है। इसी तरह बुनाई करते हुए बीच-बीच में बांस की पतली लकड़ियों को लगा कर टोकरी की संरचना तैयार कर लिया जाता है।

इको फ्रेंडली मौर (सेहरा) : बस्तर में होने वाली अधिकतर शादियों में अभी भी छिंद के पत्तों से बनने वाली सेहरे को तरजीह दी जाती है। बदलते परिवेश में भले ही नई पीढ़ी रेडीमेट सेहरे का इस्तेमाल करने लगी हो लेकिन छिंद के पत्तों का पूरी तरह जगह लेना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन है। पुराने और पारंपरिक लोग आज भी घरों की शादियों में इसे ही इस्तेमाल करते हैं। छिंद फल का उपयोग जहां गुटखा व्यवसायी सुपारी के विकल्प के रूप में करने लगे हैं, वहीं छिंद के पेड़ के तने और पत्तों का उपयोग घर बनाने में भी होता है।

लोक जीवन में जन्म संस्कार से लेकर मृतक संस्कार तक छिंद के पत्तों की शिल्पकला का महत्व :

छत्तीसगढ़ के लोक जीवन में छिंद के वृक्ष का विशेष महत्व है। छत्तीसगढ़ आदिवासी बहुल राज्य होने के कारण यंहा के विभिन्न संस्कारों में प्राकृतिक वस्तुओं की निकटता दिखाई पद्धति है। यंहा जन्म से लेकर मृत्यु तक के विभिन्न अवसरों पर प्राकृतिक वस्तुओं का ही उपयोग किया जाता है। जन्म संस्कार से लेकर मृतक संस्कार तक एवं सुख-दुख के विविध अवसरों पर छिंद का किसी ना किसी स्वरूप में अवश्य उपयोग किया जाता है। छत्तीसगढ़ में छिंद की पत्ता शिल्प कला लोक जीवन एवं संस्कृति का अभिन्न अंग है। जन्म संस्कार में जन्म होने के छठवें दिन विशेष शुद्धि कर बच्चे का नामकरण किया जाता है। इस अवसर पर जाति एवं जनजातीय समाज के परिवारजन जन्म बच्चे के लिए विविध प्रकार के खिलौने लाते है। जिसमें छिंद के पत्तों से बने प्राकृतिक खिलौने भी शामिल होते है। छत्तीसगढ़ के जातीय एवं जनजातीय समाज में विवाह संस्कार बड़े ही धूम धाम से किया जाता है। वन आच्छादित प्रदेश होने के कारण विवाह के अवसर पर विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग किया जाता है। यहाँ आभूषण के तौर पर छिंद के पत्तों से बने अंगूठी तथा दूल्हा दुल्हन मुकुट के मौर(सेहरे) में भी छिंद के पत्तों से बने मौर का ही उपयोग किया जाता है। ग्रामीण भारत में इसकी लंबी संयुक्त पत्तियों से बड़े-बड़े टाट तैयार किये जाते है, जो बैलगाड़ी को चारों ओर से घेरने के काम आते हैं। ग्रामीण झोपड़ी और जानवरों के अस्तबल कोठे (पशुओं के रहने की जगह) आदि इन्हीं से बनाते हैं।

भविष्य के उपयोग को ध्यान में रखते हुवे छत्तीसगढ़ में छिंद (देशी खजूर) के पत्ते से राखी एवं उसके फल से गुड़ भी बनाया जा रहा है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

बांस शिल्प कला

पृष्ठभूमि :

भारत की हस्तकलाओं की परंपरा जितनी पुरानी है उतनी ही विविधताओं से भरी हुई है। हालांकि इसका कोई लिखित प्रमाण नहीं है, लेकिन पुराने समय में आदिवासी अपने व्यक्तिगत सुविधा के लिए बांस का प्रयोग किया करते थे। बांस मानव सभ्यता से जुड़ी प्राचीनतम सामग्रियों में से एक है। पूर्वोत्तर भारत में तो समूचा जीवन ही बांस पर आधारित होता है। मध्य भारत के आदिवासी क्षेत्रों में भी बांस एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक सामग्री है जिसका प्रयोग अनेक प्रकार से किया जाता है। वास्तव में बांस के बिना ग्रामीण जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती।

छत्तीसगढ़ के संदर्भ में :

बांस शिल्प कला छत्तीसगढ़ ही नहीं बल्कि विश्व के प्राचीनतम एवं अत्यंत लोकप्रिय शिल्पों में से एक है। इस सुलभ, सरल एवं लोकप्रिय शिल्प की कृतियाँ, गाँव हो या शहर, प्रत्येक घर में किसी न किसी रूप से विद्यमान रहती छत्तीसगढ़ में लगभग 70 परसेंट वनाच्छादित है जहां घने जंगल और आदिवासी अंचल हैं और यहां के जातियों के द्वारा प्रकृति व पेड़ों का उपयोग किया जाता है जिनमें देसी बांस के अनेक जंगल हैं। छत्तीसगढ़ के ग्रामीण क्षेत्रों में बांस की अपनी एक अहमियत है परन्तु बस्तर अपनी विशिष्ट पहचान है। यहाँ के मुरिया आदिवासियों ने बांस से बनाई गयी वस्तुओं को अतिरिक्त रूप से अलंकृत करने हेतु इसकी सतह को गर्म चाकू से जलाकर विभिन्न आकृतियां उकेरने की विशेष तकनीक का विकास किया है। वे अपने नृत्य–गानों में बांस से बनाई गई अनेक सज्जा सामग्री एवं वाद्यों का प्रयोग करते हैं, जिन्हें वे इसी तकनीक से अलंकृत करते हैं। तूरी, बसोर, कोड़ाकू एवं पारधी छत्तीसगढ़ के ऐसे व्यावसायिक समुदाय हैं जो बांस से उपयोगी वस्तुएँ बनाकर अपनी आजीविका चलते हैं। बस्तर क्षेत्र में यह कार्य पारधी लोग करते हैं।

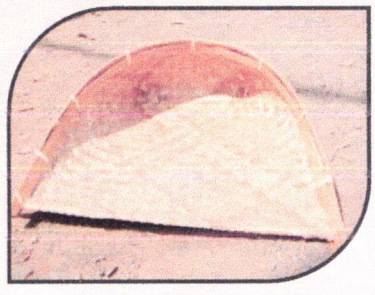

आवश्यक औजार एवं कच्चा माल :

बांस कला में ज्यादातर विभिन्न कलाकृतियों एवं सामग्रियों के निर्माण हेतु कच्चे माल के रूप में बांस के एक प्रजाति पाती बांस का उपयोग किया जाता है। प्रमुख रूप से कच्चे बाँस का ही उपयोग करते हैं इसमें प्रमुख रूप से धारदार लोहे का औजार बांकी एवं दाढ़ी नामक औजार का उपयोग करते हैं आधुनिक उपकरण में स्लाइसर मशीन जो बांस की स्लाइस निकालता है का उपयोग किया जाता है।

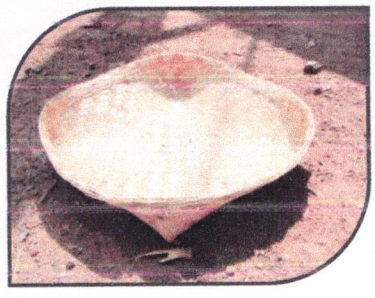

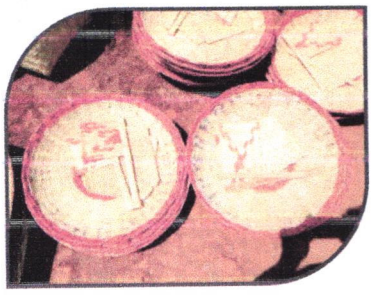

Dr. C. V. Raman University ★ Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.) ★ Registrar

बांस कला तकनीक :

बांस कलाकृतियों के निर्माण में प्रमुख रूप से पारंपरिक तकनीक का ही उपयोग किया जाता है ज्यादातर बांस शिल्पी बस और समुदाय के होते हैं एवं आदिवासी क्षेत्रों में धूलियाए गोंडए कमार जनजाति एवं अबूझमाड़या जनजाति का प्रमुख व्यवसाय होता है यह शिल्पी सर्वप्रथम जंगल से कच्चे बांस को काटकर उसके सारे गाट को समतल कर उसमें बाकी औजार लोहे के धारदार औजार से चीरा लगाकर अपनी उपयोगिता आधारित बार एक बार एक पतले पतले स्लाइस निकाल लेते हैं बांस की पतली तीली सरई कहलाती है जबकि चौड़ी पट्टी को बिरला कहा जाता है। टोकरी अथवा सूपा के किनारे पर लगाई जाने वाली मोटी और मजबूत पट्टी फाता कहलाती है। फिर इस इस लाइटों को से बुनाई विधि से विभिन्न कलाकृतियों का निर्माण करते हैं उसके बाद इसे पेंटिंग कर विपणन हेतु ग्रामीण हाट बाजारों में ले जाते हैं।

छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र के नारायणपुर जिला मुख्यालय में शासन द्वारा वास कला के हंस लिपियों को एक स्थान पर बसाकर वासियों का शिल्पग्राम बसाया गया है जहां इन चिंताओं को कच्चा माल से लेकर आधुनिक उपकरण एवं औजार एवं कार्यशाला उपलब्ध कराने के साथ–साथ आवास की सुविधा भी परिवार के साथ रहने के लिए प्रदान किया गया है।

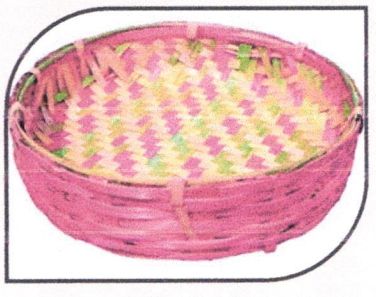

रीति रिवाजों में बांस है जरूरी

भारतीय संस्कृति में भी बांस का विशेष महत्व रहा है। पर्व–त्योहार, रीति–रिवाजों में बांस का इस्तेमाल किसी न किसी रूप में होता है। हिंदू रिवाज के अनुसार बांस के बर्तनों में चुलिया, टिपारे, ढौरिया, बिजना, सूपा, सिंदौरा आदि का विवाह में होना जरूरी होता है। इनके बिना रस्में पूरी नहीं होती। साथ ही साथ बाँस का उपयोग धनुष– बाण, कृषि कार्य, गृह, झोपड़ी, आहाता एवं छत निर्माण जैसे कार्यों में किया जाता है

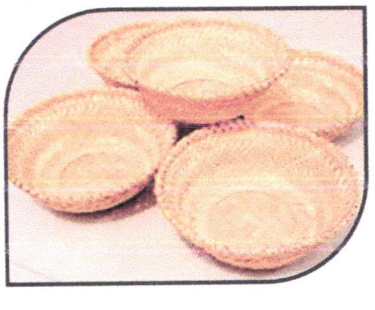

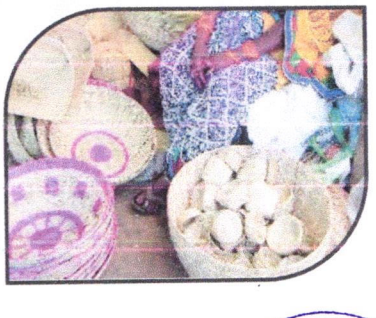

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

पर्यावरण का साथी है बांस

बांस पर्यावरण बचाने में मददगार है। बांस के पौधे मिट्टी की उपजाऊ ऊपरी परत का संरक्षण करते हैं। बांस की लगातार गिरती पत्तियां वन भूमि पर चादर–सी फैली रहती है। इससे नमी का संरक्षण बना रहता है। साथ ही तेज बारिश के समय ये पत्तियां ढाल बनकर भूमि की उपजाऊ ऊपरी परत का संरक्षण करती है। बांस के पौधों में हवा में उपलब्ध कार्बन–डाइऑक्साइड को सोखने की अच्छी क्षमता है।

भोज्य पदार्थ के रूप में

छत्तीसगढ़ में बांस को एक भोज्य पदार्थ की भांति खाया भी जाता है। बांस की नई छोटी छोटी कोपल खाने के काम आती हैं यह बाँस कोपल अत्यंत मुलयम, सुंदर एवं स्वादिष्ट होतें है इन्हे यहाँ करील ;बास्ता) के नाम से जाना जाता है।

हरा बांस लाता हुआ बंसोड़

'करीं' से बांस छीलती हुई महिला

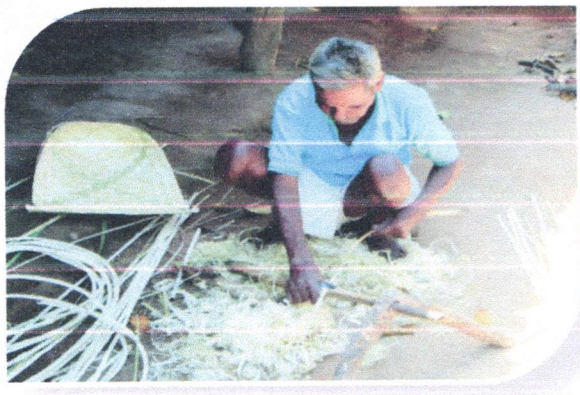

बांस की पट्टियों को और छीलता हुआ वृद्ध

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

रंगीन पट्टियों से
सूपा बनाती महिला

टोकरी बनाता
हुआ युवक

गोबर या मिटटी से लीपकर
बर्तन जैसी बनाई गयी 'दौरी'

मछली पकड़ने वाली 'चोंगरी'
और मुर्गे रखने वाली 'झांपी'

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

बेल मेटल क्राफ्ट्स (ढोकरा आर्ट)

पृष्ट्भूमि

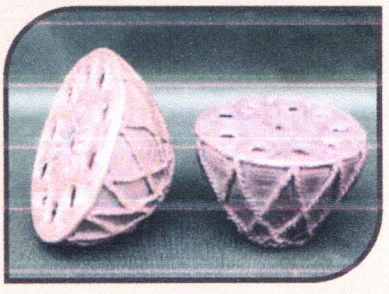

बेल मेटल शिल्प की शुरुआत दुनिया में मोहनजोदड़ो और हड़प्पा जैसी सबसे पुरानी सभ्यताओं से हुई थी और इस तथ्य को साबित करने के लिए कई सबूत हैं। आज भी इस शिल्प का अभ्यास देश के कई हिस्सों जैसे उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड आदि में किया जाता है। बेल धातु के कारीगर ज्यादातर आदिवासी होते हैं जो व्यापार के पारंपरिक और पुराने होने का संकेत देते हैं। आदिवासियों का बेल धातु व्यापार और जंगल से एक निश्चित संबंध है, क्योंकि वे जंगल में अपना कच्चा माल पाते हैं।

छत्तीसगढ़ संदर्भ मे

छत्तीसगढ़ में बिल मेटल आर्ट को गढ़वा कला भी कहा जाता है क्यों की बस्तर के गढ़वा समुदाय के लोग इसे ज्यादातर बनाते है बस्तर में इसे बस्तर आर्ट भी कहते है क्योकि इस कला में यहाँ के कारीगर इसमें बस्तर के जंगल , बस्तर के पहनावा बस्तर के आदिवासी संस्कृति बस्तर के किवदन्तिओ या कहे बस्तर के संपूर्ण संस्कृतिओ के झलक अपने कारीगिरी के द्वारा इस कला में उकेरते है जिस कारन इसे बस्तर आर्ट भी कहा जाता है।

पुराने समय में इस धातु की घंटिया बनती थी इसलिए इसे बेल्ल मेटल आर्ट भी कहते है। यह शिल्प मुख्य रूप से कोडगांव, बरकाई, जगदलपुर, एकतागुड़ा, करनपुर, सिरमुद, नांगुर आदि में प्रचलित है। ढोकरा आर्ट रायगढ़ जिले के एकताल ग्राम में भी प्रचलित है जहा झारा समुदाय के लोग इसकी कारीगरी करते है बस्तर में इसे गढ़वा समुदाय के लोग ज्याादातर कारीगरी करते है इसलिये इसे घड़वा या गढ़वा कला के नाम से भी जाना जाता है।

आवश्यक कच्चा माल एवं सामाग्री का विवरण :–

बेल धातु एक कठोर मिश्र धातु है जिसका उपयोग घंटियाँ बनाने के लिए किया जाता है। यह कांस्य का एक रूप है, आमतौर पर तांबे से टिन का लगभग 3रू1 अनुपात (78ः तांबा, 22ः टिन)। भारत में, छत्तीसगढ़, असम, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा राज्यों में, इसे कान्ह और कांस कहा जाता है और इसका उपयोग खाना पकाने और खाने के बर्तनों के लिए किया जाता है, छत्तीसगढ़ के बस्तर क्लस्टर बेल मेटल क्राफ्ट्स ;ढोकरा आर्टद्धए असम में सार्थेबारी और भुवनेश्वर के पास बालाकाती इस शिल्प के लिए सबसे प्रसिद्ध हैं।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bhatpur (C.G.)

आवश्यक सामाग्री

स्क्रैप मेटल , चारकोल , सेम पत्ता , धान भूषि , प्राकृतिक मूम , नदी किनारे की मिटटी, काली मिटटी,

उपकरण

मूथनी या टीपना, चिंमटा या संडासी , कुर्शीबल , हथवारी , स्टोन प्लेट, चरखा, पिचकी, फाइलर, चाकू हथौड़ा

बनाने की तकनीक एवं प्रक्रिया

छत्तीसगढ़ के बस्तर क्लस्टर बेल मेटल क्राफ्ट्स (ढोकरा आर्ट) में एक से अधिक धातु, मुख्य रूप से पीतल के पिघले हुए मिश्र धातु का उपयोग किया जाता है, जिसमें हाथ ढलाई के कई चरण होते हैं। प्रत्येक टुकड़े को एक ताजा सांचे की आवश्यकता होती है, जो एक बार उपयोग करने के बाद टूट जाता है। प्रक्रिया को खोई हुई मोम तकनीक के रूप में भी जाना जाता है।इस कला को बनाने की प्रक्रिया के लिए छत्तीसगढ़ में विशेष तकनीक है जिसमे लगभग बारह चरणों में यह प्रक्रिया पूरी होती है जिसका विवरण चित्रों के माध्यम से दिया जा रहा है।

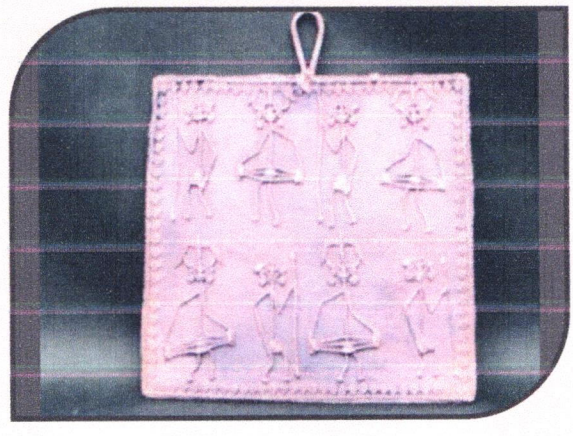

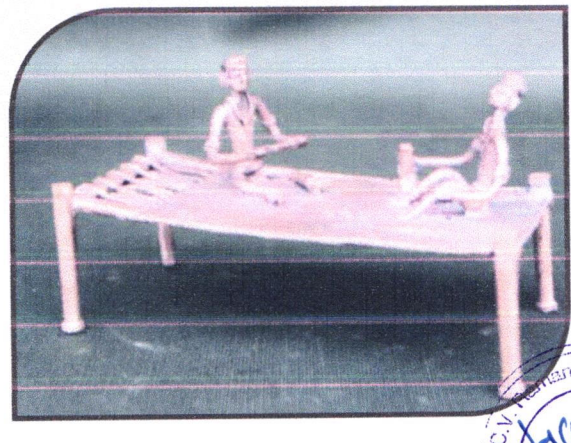

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

बेल मैटल (ढोकरा आर्ट) बनाने की प्रक्रिया

चरण-1 : काली मिट्टी को महीन पीसना

चरण-2 : मिट्टी को भूसी से गूंथ लिया जाता है

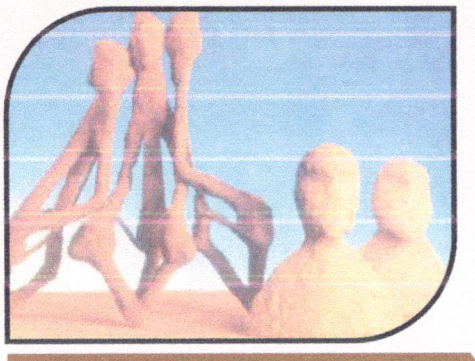

चरण-3 : मिट्टी के मिश्रण की परतों को धूप में सुखाकर एक मिश्रित सांचा बनाया जाता है।

चरण-4 : एक पिचकी के माध्यम से मधुमक्खियों के मोम की पतली किस्में निकाली जाती हैं

चरण-5 : मिट्टी के सांचे को पूरी तरह से मोम के धागों से लपेटा जाता है।

चरण-6 : अलंकरण बनाने के लिए मोटे और पतले धागों का उपयोग किया जाता है। एक लकड़ी के स्पैटुला का उपयोग किस्में को समतल करने के लिए किया जाता है ताकि पृष्ठभूमि को चिकना किया जा सके और सजावट को उजागर किया जा सके

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

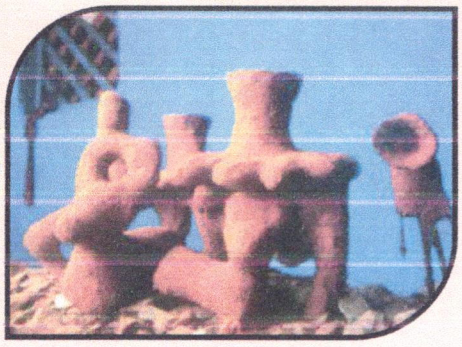

चरण-7 : मोल्ड मिट्टी, चूरा और लकड़ी का कोयला की एक परत के साथ कवर किया गया है। सूखने पर मिट्टी की दूसरी परत लगाई जाती है और फिर डेंगुर मिट्टी और चावल की भूसी की अंतिम परत लगाई जाती है

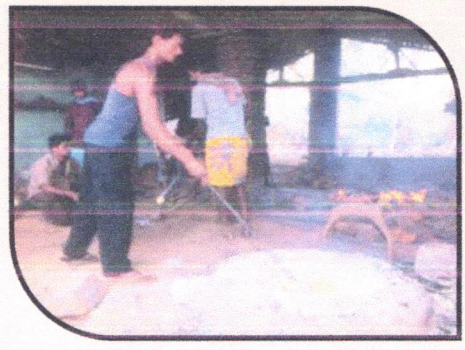

चरण-8 : मोल्ड को 1100 डिग्री सेल्सियस पर बेक किया जाता है। यह मोम को पिघला देता है और मिट्टी की परतों के बीच एक महीन गुहा बनाता है

चरण-9 : धातु को पिघलाया जाता है और गुहा में डाला जाता है। पिघला हुआ धातु अंतरिक्ष के माध्यम से बहता है और मिट्टी के सांचे की दीवारों की छाप लेता है

चरण-10 : मोल्ड को दो से तीन घंटे तक ठंडा होने दिया जाता है और इसे अक्सर पानी के साथ छिड़का जाता है, यह शीतलन प्रक्रिया को तेज करता है और मोल्ड को तोड़ने के लिए नरम करता है।

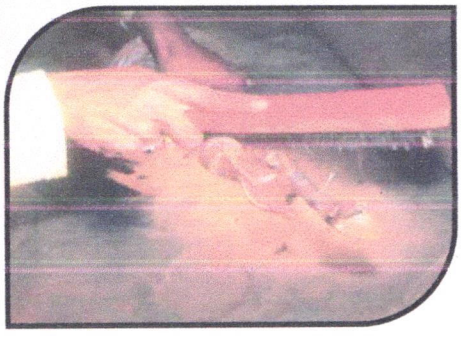

चरण-11 : मोल्ड को दो से तीन घंटे तक ठंडा होने दिया जाता है और इसे अक्सर पानी के साथ छिड़का जाता है, यह शीतलन प्रक्रिया को तेज करता है और मोल्ड को तोड़ने के लिए नरम करता है।

चरण-12 : साँचे को तोड़ा जाता है, इसके बाद कलाकृतियों को भरना और ब्रश करना होता है।

ढोकरा आर्ट बनाने की प्रक्रिया के बाद तैयार हस्तशिल्प

Dr. C.V. Raman University ★ Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)
Registrar

छत्तीसगढ़ में लोक चित्रकला

◆ सवनाही –

इस चित्रकला में महिलाओं के द्वारा घर की मुख्यद्वार की दीवारों पर गोबर से विभिन्न प्रकार के चित्रों का चित्रांकन किया जाता है जो श्रवण मास के हरेली के अवसर पर की जाती है।

◆ हस्तालिका –

यह तीजा पर्व के अवसर पर शिव –पार्वती की पूजा स्वरूप मनायी जाती है।

◆ बालपुर चित्रकला –

इस पर्व में चितेर जनजाति द्वारा पौरणिक चित्र बनाया जाता है।

◆ गोबर चित्रकारी –

यह चित्रकारी घर की महिलाओं द्वारा अन्न धन भंडार की समृद्धि हेतु दीपावली के दूसरे दिन गोवर्धन पूजा के अवसर पर सामान्यतः धान की कोठी में अनेक प्रकार के चित्र बनाई जाती है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

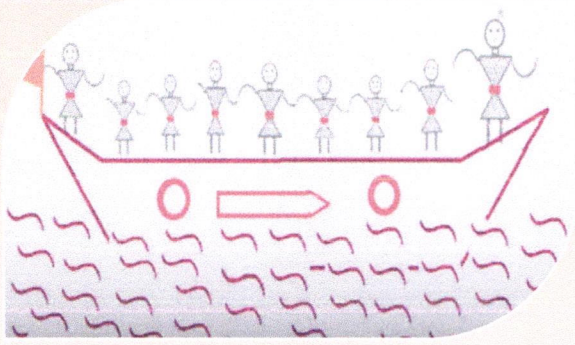

◆ आठेकन्हैया -

यह पर्व जन्माष्टमी के अवसर पर मनायी जाती है। इस दौरान घर के दीवार पर 8 पुतलिका बनाकर उनकी पूजा-अर्चना की जाती है।

◆ चौक -

यह सामान्यत: चावल के आटे से विभिन्न प्रकार क बेल- बूटे एवं पदचिन्हों के चित्र बनाये जाते हैं। यह चित्र प्राय: विभिन्न आनुष्ठानिक कार्यक्रमों के के अवसर पर घर के परछी (बरामदा) से लेकर गली तक बनाई जाती है। वर्तमान समय में चौक पुरने के स्थान पर रंगोली की प्राथमिकता बढ़ती जा रही है।

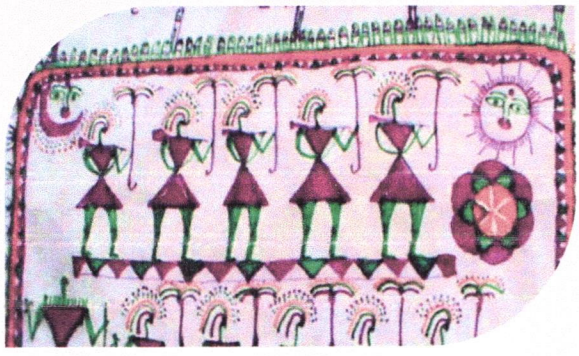

◆ नोहडोरा (उद्रेखण कला) -

यह चित्रकला सामान्यत: नये घर में प्रवेश के पूर्व दीवारों में मिट्टी के विभिन्न प्रकार के कलात्मक क्रिया कीर्ति करते है जिसमें वे विभिन्न जीव-जंतु, बेल-बूटे आदि का चित्रांकन करते हैं। जो कई वर्षों तक दीवारों पर बने रहते हैं जिसे छत्तीसगढ़ी में नोहडोरा डालना कहते हैं।

◆ गोदना -

छत्तीसगढ़ी महिलाओं में गोदना प्रिय है। बांह,हाथ, पैर, ठोढ़ी आदि पर गोदना गोदवाते हें। सर्वाधिक गोदना प्रिय जनजाति बैगा है तथा सर्वाधिक गोदना गोदवाने वाले जनजाति कमार है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

छ.ग. के प्रमुख जनजाति एवं लोक नृत्य

1. **सरहुल नृत्य -** यह नृत्य उरांव जनजाति में मुख्यत : जसपुर, सरगुजा, रायपुर क्षेत्र में प्रचलित है। इस नृत्य में साल के वृक्ष की पूजा की जाती है। साल के वृक्ष में पुष्प खिलने पर यह नृत्य किया जाता है। इस नृत्य के माध्यम से प्रतीकात्मक रूप से सूर्य व धरती का विवाह संपन्न किया जाता है।

2. **गेंडी नृत्य -** यह नृत्य मुड़िया जनजाति में प्रचलित है । इस नृत्य में सिर्फ पुरुष सदस्य ही भाग लेते हैं। बाँस की की गेंड़ी बना कर उस पर चढ़कर नृत्य किया जाता है । तीव्र गति के इस नृत्य में शारीरिक संतुलन अत्यंत आवश्यक होता है।

3. **डंडारी नृत्य -** यह नृत्य भतरा जनजाति में प्रचलित है। होली के अवसर इस नृत्य का आयोजन किया जाता है। नृत्य आरंभ करने की पूर्व एक सेमल स्तंभ की स्थापना की जाती है और स्तंभ के आसपास घूमते हुए नृत्य किया जाता है।

4. **करमा नृत्य -** यह नृत्य बैगा, उरांव, मुण्डा, कमार जनजाति में प्रचलित है। करमा नृत्य सामान्य रूप से विजयादशमी से प्रारंभ होकर वर्षा ऋतु के अंत तक किया जाता है। यह नृत्य हरियाली आने के खुशी में मनाई जाती है, करमा नृत्य को अर्द्ध गोला बनाकर मृदंग, टिमकी, झांझ के माध्यम से किया जाता है। यह नृत्य करमदेव को प्रसन्न करने के उद्देश्य से किया जाता है।

5. **सैला नृत्य -** यह नृत्य गोंड, बैगा एवं परधान जनजातियों में मुख्यत : सरगुजा, क्षेत्र में प्रचलित है। यह दीपावली प्रारंभ होकर शरद ऋतु तक चलता है। इसे सैलारीना भी कहा जाता है। ''आदिदेव '' को प्रसन्न करने उददेश्य से इस नृत्य को किया जाता है। यह नृत्य सामान्यत : गोल घेरे बनाकर किया जाता है। इस नृत्य में मांदर का प्रयोग किया जाता है ।

6. **थापटी नृत्य -** यह नृत्य कुडक जनजाति में प्रचलित है। इसका आयोजन वैशाख के माह में किया जाता है । इस नृत्य में स्त्री व पुरुष दौरान गोलाकार परिक्रमा करते हुए, चिट्कोरा, पंजा एवं ढोलक को प्रमुख वाद्य यंत्र के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kota Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

7. **ककसार नृत्य-** यह नृत्य मुड़िया व अबुझमाड़िया जनजाति में प्रचलित है। अपने प्रमुख देव लिंगदेव को प्रसन्न करने के लिए पूरी रात्रि यह आयोजित होती है। इस नृत्य के दौरान घोटुलपाटा मुड़िया जनजाति में जीवनसाथी चुनने के प्रथा प्रचलित है। इस नृत्य में तुरही या अकूम वाद्य यंत्र का प्रयोग किया जाता है।

8. **पंथी नृत्य -** पंथी नृत्य सतनामी पंथ द्वारा किया जाता है। यह एक गीत - नृत्य होता है , इसमें नृतक एक घेरा बनाकर तालबद्ध नृत्य करते हैं। इस नृत्य में गीतों के माध्यम से संत गुरु घासीदास की महिमा का वर्णन किया जाता है। पंथी नृत्य में नर्तक तालियों की थाप के साथ ही अनेक मुद्रा बदलते हुए घेरे में नृत्य करते हैं। इस नृत्य की प्रमुख विशेषता शारीरिक संतुलन का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करते हुए पंथी नर्तक मानव पिरामिड बनाते हैं सबसे ऊपर चढ़ा हुआ व्यक्ति ढोल बजाते रहता है। पंथी नृत्य में ढोल और मांदर का प्रयोग किया जाता है।

9. **बिल्मा नृत्य -** यह नृत्य मुख्यत: गोंड एवं बैगा जनजाति में प्रचलित है। सामान्यत: बिल्मा नृत्य विजयादशमी के पर्व पर किया जाता है। इस दौरान युवकों को अलग अलग नृत्य समूह बनाकर नृत्य करना होता है । इसी नृत्य के दौरान से युवा अपने जीवनसाथी चुनते है।

10. **एबालतोर नृत्य -** यह प्रमुख रूप से मुड़िया जनजाति का नृत्य है। इसका आयोजन मुख्यत: मड़ई के अवसर पर किया जाता है। मड़ई के प्रमुख देवता अंगादेव की आराधना की जाती है।

11. **परब नृत्य -** धुरवा या परजा जनजाति का यह प्रमुख नृत्य है। इसका स्वरूप ''सैन्य नृत्य'' का होता है। इसमें स्त्री व पुरुष दोनों की सहभागिता होती है। इस नृत्य के दौरान नर्तक समूह पिरामिड बनाकर नृत्य करते हैं।

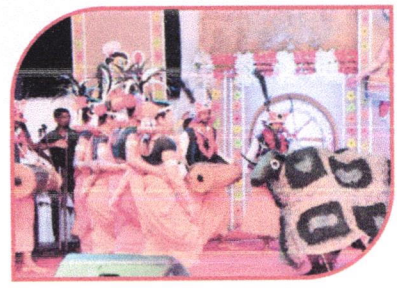

12. **गौर नृत्य -** यह नृत्य मुख्यत: मुड़िया व दंडामी माड़िया जनजाति में प्रचलित है, जो जात्रापर्व के अवसर पर किया जाता है। इस नृत्य के दौरान युवक '' मुक्क गौर '' नामक जंगली पशु के सींग की आकृति के मुकुट को धारण करते हैं और युवतियां '' तीरूण '' नामक छड़ी अपने हाथों में रखते हैं। सांस्कृतिक उद्देश्य के अलावा यह नृत्य अच्छी फसल की कामना व खुशी जीवन के उद्देश्य से किया जाता है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

13. **हुल्कीपाटा -** यह नृत्य मुड़िया जनजाति में प्रचलित है। यह नृत्य सामान्य अवसरों पर किया जाता है। इस नृत्य में प्रश्नोत्तर शैली गायन का स्वरूप भी मिलता है।

14. **परधौनी नृत्य -** यह नृत्य बैगा जनजाति का प्रमुख नृत्य है। यह नृत्य बैगा जनजाति में बारात के आगमन पर किया जाता है। इस नृत्य में नगाड़े एवं टीम की वाद्य यंत्र का प्रयोग किया जाता है।

15. **सुआ नृत्य -** यह नृत्य देवार समुदाय में प्रचलित है। यह नृत्य महिलाएं एवं किशोरियां के द्वारा दिवाली के कुछ दिन पूर्व आरंभ किया जाता है। सुआ नृत्य में एक टोकरी जिसमें धान भरा होता है, उसमें मिट्टी से बने दो सुआ शिव और गौरी के प्रतीक के रूप में श्रद्धापूर्वक रखे जाते हैं, और धान की नई बालियां रखकर लाल कपड़े से ढक दिए जाते हैं। इस नृत्य में महिलाएं प्रत्येक घर के सामने गोलाकार झुंड बनाकर ताली की थाप पर नृत्य करते हुए सुन्दर गायन करती हैं।

16. **भतरानाट्य-** भतरानाट्य भतरा जनजाति की यह नृत्य मड़ई या अन्य शुभ अवसरों पर आयोजित किया जाता है। इस नाट्य में उड़िया व अन्य भाषाओं का प्रभाव दिखाई देता है। यह कथात्मक व पौराणिक विषयों पर आधारित होती है। इसमें मृदंग, नगाड़ा, मंजीरा आदि वाद्य यंत्र का प्रयोग किया जाता है।

17. **ढाढल नृत्य -** यह नृत्य कोरकू जनजाति में प्रचलित है। इस नृत्य में मुख्यतः श्रृंगार गीत का प्रयोग किया जाता है। ज्येष्ठ व आषाढ़ की रातों में यह नृत्य किया जाता है। नृत्य के साथ साथ श्रृंगार गीत भी गाए जाते हैं।

18. **डोरला / दोरला नृत्य -** डोरला जनजाति का यह मुख्यतः विवाह या अन्य शुभ अवसरों पर किया जाता है। इस नृत्य में स्त्री और पुरुष दोनों भाग लेतें है।

19. **कोलदहका नृत्य -** यह नृत्य कोल जनजाति द्वारा मुख्यतः सरगुजा क्षेत्र में प्रचलित है। जिसे कोलहारी नृत्य के नाम से भी जाना जाता है इसमें ढोलक का प्रयोग मुख्य वाद्य यंत्र के रूप में किया जाता है। इस नृत्य के दौरान महिलाओं के सवाली गीतों का जवाब पुरुषों को देना होता है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

20. **राऊत नृत्य (गहीरा नाच)** - यादव समुदाय के लोगों द्वारा यह राउत नृत्य किया जाता है। इस समुदाय के लोगों को यादव, रावत,राउत,यदु ,ठेठवार आदि नामों से भी जाना जाता है। राऊत नृत्य आदिम आर्य सभ्यता , कृषि और पशुपालन के प्रति श्रद्धा समर्पित है , जो महाभारत काल से चली आ रही है। छत्तीसगढ़ी लोक जीवन में प्रचलित लोक कथा के अनुसार श्री कृष्ण द्वारा अपने दुष्ट मामा कंस के वध के पश्चात विजय नृत्य के रूप में इस राऊत नृत्य का प्रचलन हुआ। यह नृत्य कार्तिक माह के प्रबोधनी एकादशी से प्रारम्भ होकर पूर्णिमा तक किया जाता है। इस नृत्य में गड़वा बाजा, घुंघरू, झाँझ , मंजीरा, ढ़ोलक, नगाड़ा, झुमका जैसे वाधयंत्र प्रमुख है।

21. **माओपाटा-** यह मुड़िया जनजाति का शिकार नाटिका है, इसका स्वरूप गीतनाट्य की तरह है। इसमें आखेट पर जाने की तैयारी से लेकर आखेट करने व सकुशल वापस लौटने और विजय समारोह मनाया जाने तक की घटनाओं का नाटकीय प्रस्तुतिकरण किया जाता है। सामान्यत: दो युवक गौर या बाइसन बनते हैं। इसमें टिमकी आदि वाद्य यंत्र का प्रयोग किया जाता है।

22. **दमनच नृत्य** - यह नृत्य पहाड़ी कोरवा जनजाति में प्रचलित है। इस नृत्य का आयोजन प्राय: विवाह के अवसर पर रातभर किया जाता है । इस नृत्य में सभी आयु के लोग भाग लेते हैं।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

छत्तीसगढ़ के लोकगीत एवं लोकगाथा

1. **पंथी गीत** : यह छत्तीसगढ़ के सतनाम पंथ का परम्परागत नृत्य गीत है। पंथी गीत छत्तीसगढ़ के प्रसिद्ध लोक गायनों में से एक है, इसके गायन का प्रमुख विषय गुरू घासीदास जी के संदेशों एवं सत्कार्यों की प्रेरणा को जनसामान्य तक गीत के माध्यम से पहुँचाना है। इसमें गायन के साथ मुख्य वाधयंत्र मांदर, झांझ होते हैं।

भगत के भाव ले भगती सिरजे, भाव मा बसे भगवान
कलयुग मा आमरौतिन ले सिरजे, गुरू घासीदास सुजान

2. **करमा गीत** : करमा गीत मुखत : नृत्य गीत है। यह छत्तीसगढ़ के आदिवासियों का मुख्य लोकगीत है। इस गीत के माध्यम से लोग प्रकृति की पूजा कर अच्छे फसल की कामना करते हैं, साथ ही बहनें अपने भाइयों की सुरक्षा के लिए प्रार्थना करती हैं। करमा लोकगीतों में जीवन की वास्तविक और मानवीय संवेदनाओं का वर्णनन होता है।

काल कोनो ल छोड़े नाहीं राजा रंक भिखारी।
चोला चार दिना के राम, माटी मां मिल जाही .....

3. **सुआ गीत** : गोंड जनजाति के स्त्रियों का नृत्य गीत है। यह गीत स्त्रियों के विरह को व्यक्त करता है। सुआ गीत में शिव और गौरी के प्रतीक होते हैं, इस गीत की प्रत्येक पंक्ति में स्त्रियां सुअना को सम्बोधित करते हुए अपनी आंतरिक वेदना को व्यक्त करती है।

तरी हरी नाना मोर नाना सुवाना रे, सुआ हो.....
तरी हरी नहा नारी न रे सुआ हो ,तरिहरि नहा नारी ना .....

4. **ददरिया गीत** : यह मूलत : एक प्रेम-गीत है जिसमें श्रृंगार रस की प्रधानता होती है। ददरिया दो-दो पंक्ति के स्फुट गीत होते हैं, जो लोक-गीत-काव्य के श्रेष्ठ उदाहरण होते हैं। ददरिया गीत स्त्री और पुरुष मिलकर अथवा अलग-अलग भी गाते हैं। जब स्त्री और पुरुष गाते हैं तब ददरिया सवाल-जबाब के रूप में गाया जाता है। ददरिया की लोकधुन इतनी लोकप्रिय और मधुर होती है कि कोई व्यक्ति उसे आसानी से गा सकता है। हर ददरिया को उसकी दूसरी पंक्ति के अंतिम शब्द अथवा स्वर को पकड़कर गाया जाता है, जिसे 'छोर' कहते हैं। ददरिया किसी भी समय गाया जा सकता है। महुआ बीनते हुए, धान रोपते हुए, धान काटते हुए कभी भी किसी समय ददरिया गीत गाए जा सकते हैं। ददरिया गीत को छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का राजा कहा जाता है।

बटकी म बासी अऊ चुटकी म नून
मै तो गावतथव ददरिया तै कान दे के सुन वो चना के दार।।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kota, Bilaspur (C.G.)

5. **सोहर गीत** : जन्म संस्कार विषयक गीत को सोहर गीत कहा जाता है। यह गीत बच्चे के जन्मोत्सव के शुभ अवसर पर गाया जाता है।

महला मां ठाढि बलमजी, अपन रनिया मनावत हो
रानी पीलो मधु-पीपर, होरिल बर दूध आहै हो।

6. **भड़ौनी गीत** : यह विवाह के समय हंसी-मजाक करने के लिए गाया जाने वाला लोक गीत है।

बने बने तोला जानेंव समधी, मड़वा में डारेंव बांस रे
झालापाला लुगरा लाने, जरय तुंहर नाक रे
दार करे चांउर करे, लगिन ला धराये रे

7. **राऊत गीत** : यादव समाज द्वारा गया जाने वाला नृत्य गीत है। गोवर्धन पूजा के दिन इनका नृत्य गीत प्रारंभ होता है।

ए पार नदी ओ पार नदी। ...बिच म टेड़गी रुख रे.....
सोन चिरैया अंडा पारे हेरेक बेरा दु:ख रे। .....

8. **भोजली गीत** : यह गीत सावन माह में महिलाओं द्वारा गाया जाता है। इस गीत को भोजली पर्व रक्षाबंधन के दुसरे दिन भी गया जाता है।

देवी गंगा देवी गंगा लहर तुरंगा
हो लहर तुरंगा

9. **जवांरा गीत** : यह नवरात्रि के अवसर पर गाये जाने वाला माता का गीत है। जंवारा निकालने के अवसर पर सामूहिक रूप से गाया जाता है.

फुल गजरा ओ दाई बर , फुल गजरा ।
गुथौं महामाई के बर , फुल गजरा ॥
काहेन फूल के गजरा , अव काहेन फूल के हार ।
काहेन फूल के माथे मकुटिया , सोला हो सिंगार ॥
माइ बर फूल गजरा ओ दाई बर फुल गजरा ।
गुथौं हो मालिन के अंगना , फुल गजरा ॥

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kota, Bilaspur (C.G.)

10. **फाग गीत** : इस गीत को फागुन माह से होली तक गया जाता है। इस गीत में प्रमुख वाद्ययंत्र नगाड़ा होता है।

तोला खवाहूं गुल-गुल भजिया,
तोला खवाहूं गुल-गुल भजिया
फागुन के रे तिहार,
तोला खवाहूं गुल-गुल भजिया ।

11. **सवनाही गीत** : सवनाही गीत को वर्षा ऋतू में प्रथम बरसात के अवसर से माता सीतला के मंदिर में गया जाने वाला गीत है। इस गीत में पुरुष होते है । बुजुर्ग पुरुष इस गीत को गातें है और देवी सीतला के मंदिर में ठाकुर देव के पास में पूजा किया जाता है ।

12. **बिलमा गीत** : यह बैगा जनजातियों एक प्रमुख नृत्य गीत है इस गीत को दशहरे के अवसर पर गाया जाता है इस गीत को मिलन गीत की श्रेणी में आतें है।

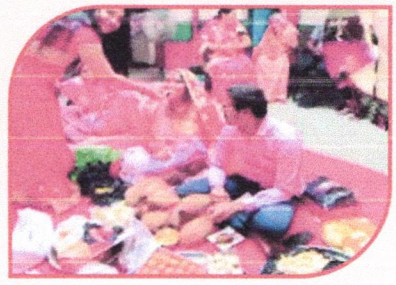

13. **सधौरी गीत** : सधौरी गीत प्राय : गर्भवती स्त्री के गर्भधारण के सातवें माह में आशीर्वाद स्वरूप गाया जाने वाला लोक गीत है। इस गीत में माध्यम से होने वाले बच्चे की मंगल कामना के साथ उसे अप्रत्यक्ष रूप से अपनी संस्कृति से अवगत कराया जाता है।

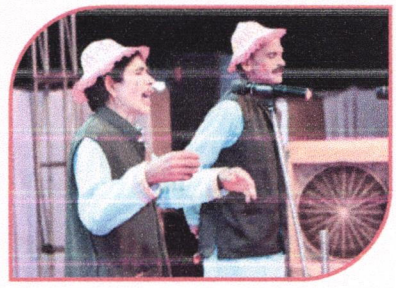

14. **घोटुल पाटा** : यह गीत मृत्यु के अवसर पर मुड़िया जनजाति द्वारा गया जाता है, इस गीत को बुजुर्ग व्यक्ति गातें है।

15. **गम्मत गीत** : यह गीत गणेश महोत्सव के समय गाया जाता है। इस गीत में देवी-देवताओं की स्तुति की जाती है।

16. **चइतपरब गीत** : यह छत्तीसगढ़ का एक प्रसिद्ध जनजातीय गीत है जो बस्तर क्षेत्र में गायी जाने वाली स्त्री पुरुषों की प्रतिद्वंद्विता का गीत है तथा चैत्र मास की रात में इसे गाया जाता है।

17. **बारहमासी गीत** : यह गीत मुख्य रूप से सेवा गीत है इस गीत को गाने की शुरुआत प्रत्येक वर्ष ज्येष्ठ माह में होती है। इस गीत में प्राकृतिक सुन्दरता का वर्णन एवं उसकी महिमा व्यक्त की जाती है।

18. **रीना गीत** : यह नृत्य गीत है जिसे गोंड़ एवं बैगा जनजातियों की महिलाओं द्वारा दीपावली के समय गाया जाने वाला लोक गीत है।

19. **लेंजा गीत** : यह बस्तर के आदिवासी बहुल क्षेत्र का प्रमुख जनजातीय गीत है। जो विशुद्ध हल्बी जनजाति का गीत है। इसके गाए जाने का कोई भी निर्धारित समय नहीं है। स्त्रियाँ परुष द्वारा किसी भी हर्षित समय पर गाया जाता है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

20. **बैना गीत** : तंत्र-मंत्र के संदर्भ में गाया जाने वाला यह लोकगीत देवी-देवताओं की स्तुति में उन्हें प्रसन्न करने के लिए गाया जाता है।

21. **रीलो गीत** : यह गीत विवाह के अवसर पर रात्रि में बारी-बारी से स्त्रियों तथा पुरुषों के द्वारा गाया जाता है। गायक नृत्य की मुद्रा में भी रहते हैं। यह छत्तीसगढ़ का एक प्रसिद्ध जनजातीय गीत है जो माडिया एवं मुरिया जनजातियों का गीत है, किन्तु इसका विस्थापन वर्तमान में हल्बी जनजाति में हो गया है।

22. **ढोलकी गीत** : ढोलक बजाकर समान्य अवसरों पर केवल महिलाओं द्वारा गाए जाने वाले इस लोक गीत में भगवान राम और श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया जाता है।

23. **देवार गीत** : यह गीत देवार जाति में गाया जाने वाला यह नृत्य है यह गीत लोक कथाओं पर आधारित होता है।

24. **धनकुल** : यह बस्तर क्षेत्र का प्रमुख धार्मिक गीत है। जिसे लक्ष्मी जागर के समय गया जाता है

25. **नगमत गीत** : इस गीत को नागपंचमी के अवसर पर गया जाता है, इस लोक गीत को गुरु की प्रशंसा के साथ ही नाग-देवता का गुणगान तथा नाग दंश से सुरक्षा की के रूप में गाया जाता है।

26. **बरूआ गीत** : उपनयन संस्कार के समय गाए जाने वाले गीत को बरूआ गीत कहा जाता है। इस गीत के द्वारा बरूआ अपने सगे सम्बन्धियों से भिक्षा की याचना करता है।

27. **कोटनी गीत** : यह विवाह गीत है जो लगन के मुहूर्त पर गाया जाता है। विवाह स्थल पर स्त्री और पुरुष सामूहिक रूप से इसे गाते हैं। एक ओर स्त्रियाँ रहती है और दूसरी ओर पुरूष पुरूषों की संख्या पांच तथा स्त्रियों की सात होती है। भाव श्रृंगारिक होते हैं।

28. **विवाह गीत** : यह गीत विवाह के अवसर पर विभिन्न प्रकार के गीतों का गायन किया जाता है। जिसमें से प्रथम दिवस चूलमाटी व तेलपधी गीत द्वितीय दिवस मायन गीत एवं अंतिम दिवस में वर के स्वागत के लिये परधौनी गीत तथा दूल्हे के भाइयों व दुल्हन की बहनों के मध्य हास्य- परिहास शैली में महीनी गीत, भांवर के समय भांवर गीत, टिकावन गीत एवं अंत में विदाई के समय विदाई गीत का गायन करते हैं।

29. **लोरिक चंदा** : यह उत्तर भारत की लोकप्रिय प्रेम लोकगाथा है। इसमें लोरिक और चंदा के प्रसंग को क्षेत्रीय विशिष्टता के साथ गाया जाता है। इसे छत्तीसगढ़ में चंदैनी गायन कहा जाता है। लोरिक की शैली भी मूलत : गाथात्मक है। लोरिक चंदा छत्तीसगढ़ में नृत्य गीत के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। चंदैनी नृत्य में टिमकी तथा ढोलक की संगत की जाती है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

30. **ढोलामारू** : यह मूलत: राजस्थान की लोकगाथा है, परन्तु यह सम्पूर्ण उत्तर भारत में प्रचलित है। मध्य प्रदेश के मालवा, निमाड़ तथा छत्तीसगढ़ के बुंदेलखंड में इसे गाया जाता है। छत्तीसगढ़ में ढोलामारू को प्रेम गीत के रूप में देखा जाता है। छत्तीसगढ़ी ढोलामारू कथा में मारू का वर्णन अधिक होता है।

31. **पण्डवानी**: महाभारत कथा का छत्तीसगढ़ी लोक रूप ही पंडवानी कहलाता है। छत्तीसगढ़ का यह विश्वप्रसिद्ध लोक गीत महाभारत के विभिन्न वीरता प्रसंगों पर आधारित है। छत्तीसगढ़ में पंडवानी की दो शैली प्रचलित है, कापालिक और वेदमती। पंडवानी में गायक तम्बूरा लेकर गाता है तथा साथ ही साथ वह अभिनय भी करता है। इसमें तीन पात्र होते है :- 1. गायक 2. रागी 3. वादक, गायक के अन्य कलाकार साथी वाद्य यंत्रों की सहायता से सुरताल के संयोजन के साथ मुख्य गायक के साथ गाते भी हैं, और गीत के बीच-बीच में हुंकार भी भरते रहते हैं।

32. **बांस गीत**: यह यादव जाति में प्रचलित है।। यह मूलत: एक गाथा गायन है जिसमें गायक रागी और वादक होते हैं। इसमें गाथा गायन के साथ मोटे बांस के लगभग एक मीटर लम्बे सजे-धजे बांस नामक वाद्ययंत्र का प्रयोग होता है। इस गीत में गान के बीच में बांस के वाद्ययंत्र को बजाया जाता है, जिसे फूंकने से भारी भोंभों की आवाज निकलती है, जो संगीत के साथ कथा का माहौल बनाती है। इसके माध्यम से करूण गाथा गायी जाती है। बांस गीत की कथाओं में सितबसन्त, मोरध्वज, कर्ण कथा आदि प्रमुख हैं।

छेरी ला बेचव, भेंड़ी ला बेचँव, बेचव करिया धन
गायक गोठन ल बेचव धनि मोर, सोवव गोड़ लमाय

33. **भरथरी गीत**: भरथरी एक लोकगाथा है। इसमें राजा भरथरी और रानी पिंगला की कथा का गायन होता है। भरथरी के शतक और उनकी कथा ने लोक में पहुंचकर एक नई ऊर्जा और जीवंतता प्राप्त की है। भरथरी गायन प्राय: नाथपंथी गायक करते हैं। सारंगी या इकतारे पर भरथरी गाते हुए योगियों को अक्सर देखा जाता है, लेकिन छत्तीसगढ़ में भरथरी गायन के इस रूप के अलावा महिला कण्ठों के माध्यम से इसने काव्यात्मक और संगीतिक धरातल पर एक नया रूपऔर रंग ग्रहण किया है। श्रीमती सुरूज बाई खांडे भरथरी-गाथा गायन की शीर्ष लोक गायिका है।

घोड़ा रोय घोड़सार मा ,घोड़सार मा ओ
हाथी रोवय हाथीसार मा ,मोर रानी ये ओ, महल मा रोवय
मोर राजा रोवय दरबारे ओ, दरबारे ओ, भाई ये दे जी।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

34. डंडा गीत : यह गीत वर्ष में दो बार कुवांर माह और फागुन माह में पुरुषो द्वारा डंडा नृत्य के समय गया जाता है।

तोर अस जोड़ी हो ललना , मोरे अस जोड़ी

कबहू न गढ़े भगवान मोरे ललना ॥

कउन महीना म होही मंगनी अव बरनी ।

कउन महीना म होही मंगनी अव बरनी ।

मंगनी अव बरनी हो ललना , मंगनी अव बरनी ।

मंगनी अव बरनी हो ललना , मंगनी अव बरनी ।

कउन महीना मे बिहाव मोरे ललना ।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road Kota, Bilaspur (C.G.)

छत्तीसगढ़ के वाद्ययंत्र

छत्तीसगढ़ राज्य लोककला एवं संस्कृति से परिपूर्ण राज्य है। छत्तीसगढ़ की लोककला एवं संस्कृति की एक अलग ही झलक देखने को मिलती है। छत्तीसगढ़ के लोककला के अंतर्गत लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य एवं छत्तीसगढ़ी त्यौहार आभूषण एवं व्यंजन आते है। छत्तीसगढ़ के वाद्ययंत्र बड़े सुहावने एवं मनभावन होते है।

ढोल

इसका खोल लकड़ी का बना होता है जिसके ऊपर चमड़े को मढ़ा जाता हैं। इसके ऊपर लोहे की छोटी छोटी कड़ी लगी होती है। और चमड़े को कसने के लिए चमड़े की रस्सी या सूत की रस्सी का उपयोग किया जाता है। इस वाधयंत्र को हाथों से बजाया जाता है।

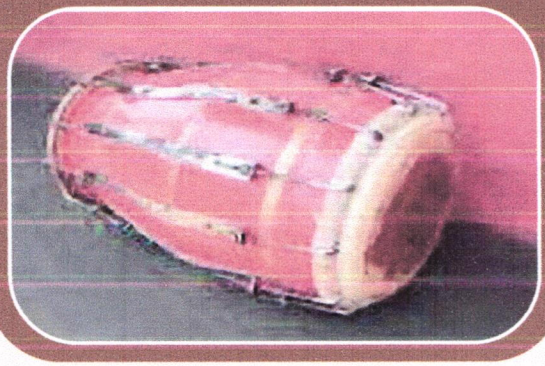

नगाड़ा

पकी हुई मिटटी की कड़ाही नुमा आकर का खोल होता है जिसके ऊपर में चमड़ा मढ़ा होता है नगाड़ा छत्तीसगढ़ में फ़ाग गीतों में उपयोग किया जाता है, जिसे लकड़ी के डंडे से बजाय जाता है। प्राय: नगाड़ा जोड़े में होता है, जिसमें एक का आवाज पतला (टिन) एक का मोटा जिसे (गद) कहते है। इसे के छोटे -छोटे बजाया जाता है। जिसे बठेना कहते है।

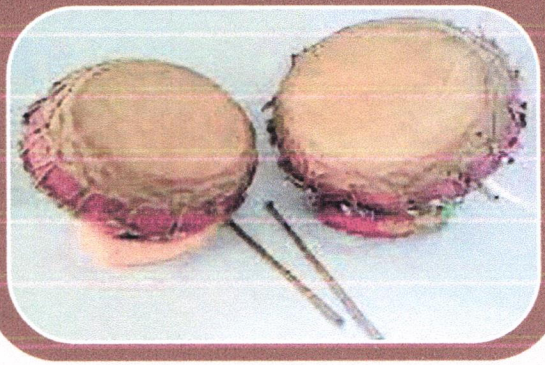

गुदुम बाजा

गुदुम बाजा एक लोहे के कड़ाही नुमा आकर का होता है जिसमे ऊपर से चमड़े का परत चढ़ा होता है। चमड़े के परत को चमड़े के रस्सी बंधा जाता है, चमड़े के ऊपर किनारे किनारे में तारकोल की परत चढ़ाई जाती है। और लोहे के पात्र के निचे छेद होता है जंहा से अण्डीतेल डाला जाता है। बजाने के लिए टायर की मोटी बठेना बनाया जाता है। जिससे पीट-पीट कर बजाया जाता है। इसे बजाने वाले वादक को निशनहा कहा जाता है। आदिवासी क्षेत्रों में इसके दोनों तरफ बारहसिंगा के सींग को लगा दिया जाता है, इस लिए इसे सींग बाजा भी कहा जाता है। छत्तीसगढ़ में गुदुम बाजा का विशेष स्थान है, इसे मांगलिक कार्यों में या खुशीयों में बजवाया जाता है।

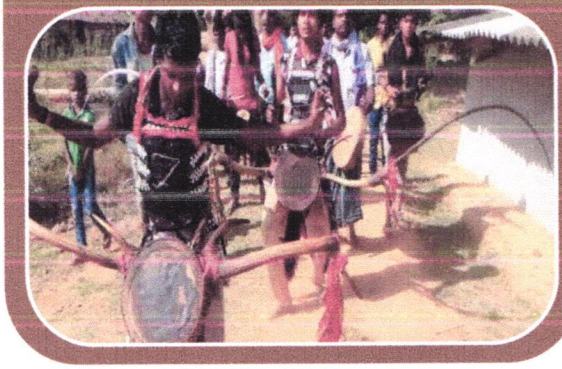

मांदर

मांदर छत्तीसगढ़ की पारम्परिक वाद्य यंत्र है जिसे मिटटी तीन फिट लम्बा गोल एक फिट गोलाकार खोल होता है। जिसके एक तरफ की गोलाई 12 इंच और दूसरी तरफ की गोलाई 6 इंच का होता है, जिसके ऊपर चमड़ा मढ़ा जाता है। और उसे चमड़े की रस्सी से खींच कर कसा जाता है। मांदर एक ऐसा वाद्ययंत्र जो छत्तीसगढ़ के सभी क्षेत्रों में बजाया जाता है कर्मा नृत्य हो, पंथी नृत्य, जसगीत, देवार गीतों में आदि बहुत से नृत्य में बजाया जाता है। इसके वादक को मंदरहा कहते है। और इसको हांथों के आघात से बजाया जाता है। इसकी ध्वनि मधुर होती है।

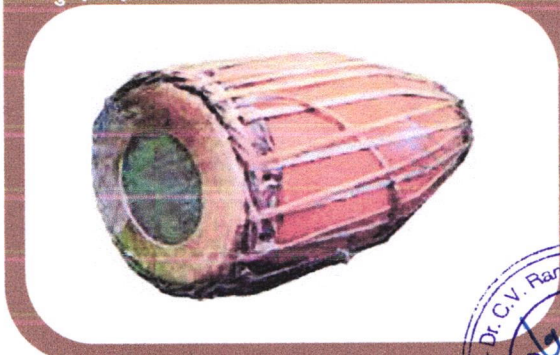

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

दफड़ा

दफड़ा लकड़ी के व्यास से तैयार कर चमड़ा मढ़ा जाता है। इसे दो लकड़ी के बठेना से बजाया जाता है। जिसमे एक लम्बा पतला होता है दूसरा छोटा और मोटा होता है। वादक उसे कंधे से लटका कर बजाता है।

मोहरी

मोहरी मुँह से फुक कर बजाने वाले वाद्ययंत्र है जो की सहनाई के जैसे होता है। जिसे बांस के टुकड़े से जाता है। इसका आकार बासुरी के सामान होता है जिसमे छः छेड़ होते है। और इसके अंत में पीतल का कटोरी नुमा पात्र लगा होता है जिसे ताड़ के पत्ते बजाया जाता है। मुख्यतः इस वाद्ययंत्र का प्रयोग गड़वा बाजा में किया जाता है, इसके बिना गड़वा बाजा अधूरा होता है इसके वादक को मोहरिहा कहा जाता है।

झांझ

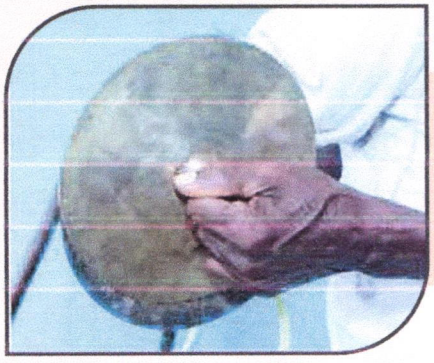

झांझ प्रायः लोहे और पीतल के गोल गोल दो प्लेट के सामान होते है जिसके मध्य में छेद होता है। छेद को रस्सी से बांध जाता है। इसे दोनों हाथों में पकड़ कर बजाया जाता है।

मंजीरा

मंजीरा एक महत्वपूर्ण पारम्परिक वाद्ययंत्र है, जो झांझ का छोटा रूप होता है। इसकी आवाज झांझ की आवाज से पतला होता है। इसका उपयोग भजन, फ़ाग गीत, जसगीत में होता है।

ताशा

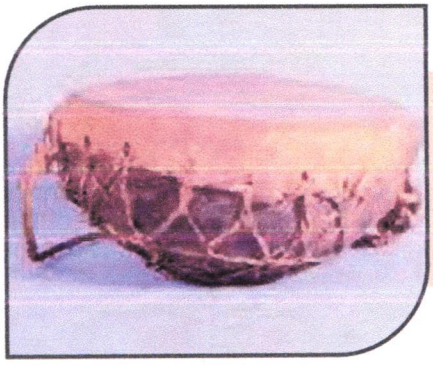

मिटटी के छोटा बर्तन जिसका आकर कटोरेनुमा होता है। उसके ऊपर में चमड़ा की परत मढ़ा जाता है और उसे रस्सी से निचे कसा जाता है। इसका उपयोग गुदुम बाजा में नगाड़े के साथ फ़ाग गीत में ज्यादातर किया जाता है। इसे बजने के लिए लकड़ी की दो छोटे-छोटे डंडों से बजाया जाता है।

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road Kota Bilaspur (C.G.)

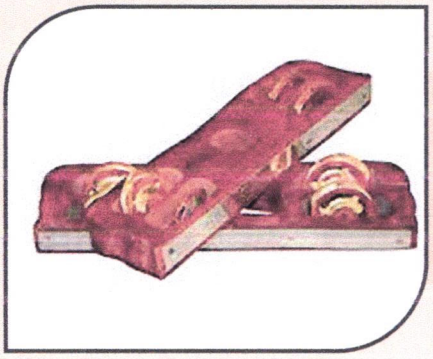

करताल

ये लकड़ी की बनी होती है। जिसकी लम्बाई 11 अंगुल होता है इसके दो भाग होते है। और उसके अंदर छोटे छोटे धातु के टुकड़े होते है जिसे उंगलीयों में फंसा कर बजाया जाता है। छत्तीसगढ़ की पारम्परिक वाद्य यंत्र है। जिसका उपयोग मुख्यत: पंडवानी और भरथरी गायन में गायक या गायिका द्वारा किया जाता है।

बांसुरी

इसका निर्माण बॉस के लकड़ी से किया जाता है, बांसुरी का प्रयोग छत्तीसगढ़ के प्राय: सभी लोक गीतों में प्रयोग होता है। इसमें आठ छिद्र होते है। जिन्हे हाथ की उंगली से स्वर के आधार पर चलाया जाता है। मुँह के द्वारा हवा फुक कर बजाया जाता है। छत्तीसगढ़ की बहुत ही प्रचलित वाद्य यंत्र है जिसे यादव (रावत) जाती के लोग इसका मुख्य मरूप से वादन करते है।

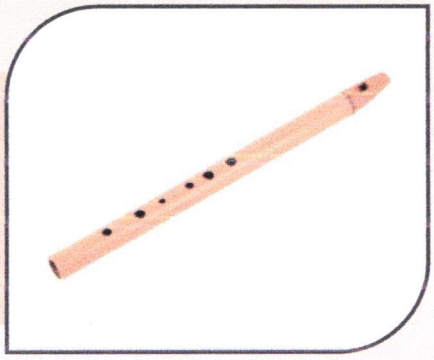

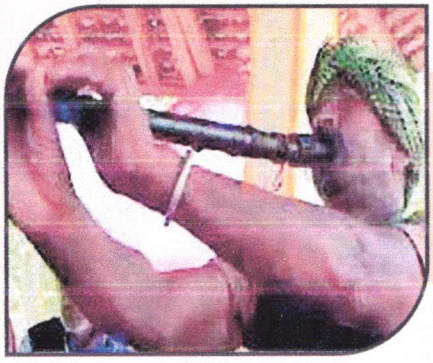

बाँस वाद्ययंत्र

इसे बांस के टुकड़े से तैयार किया जाता है। और मुँह से फंक बजाया जाता है। यह बांसुरी का ही दूसरा रूप कहा जा सकता है। इस वाद्ययंत्र का यादव (रावत) जाती द्वारा गाए जाने वाले बांस गीत में प्रयोग होता है।

अलगोजा

बांस का बाना बांसुरी जैसा वाद्य यंत्र है। जिसे बांस गीत गाते समय बांस के साथ बजाया जाता है। इसे मुख्य रूप से इसे अहीर समुदाय द्वारा बजाया जाता है।

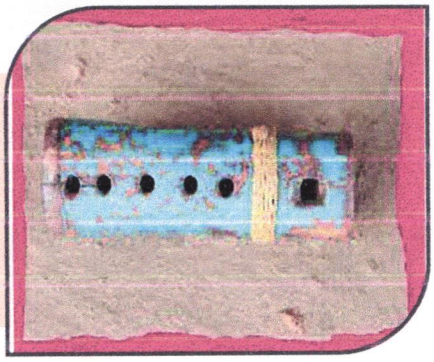

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Bilaspur (C.G.)

डफली

डफली या खंजरी ढाई इंच चौंडी लकड़ी के बानी परिधि के एक ओर चमड़ा मढ़ा जाता है और दूसरी ओर खुला रहता है। इसे एक हाथ में पकड़ कर दूसरे हाथ से थाप देकर बजाया जाता है।

तम्बूरा

लम्बे बांस के टुकड़े में तुमा की कटोरी नुमा भाग लेकर उसके ऊपर गोह की चमड़ा लगाया जाता है। जिसमें धातु की तार लगाकर हांथो से बजाया जाता है। तम्बूरा छत्तीसगढ़ लोक पंडवानी के दोनों प्रकार के शैलियों में प्रयोग किया जाता है। ये एक तंतु यंत्र है जिसमे घोड़े की पूंछ की बाल या धातु के तार का प्रयोग किया जाता है।

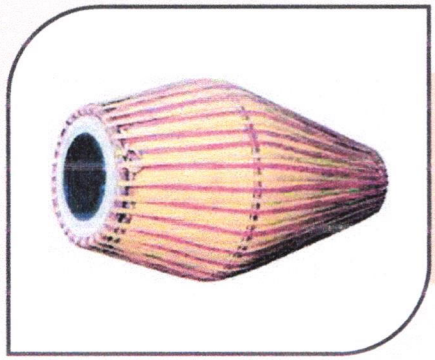

मृदंग

मृदंग प्राचीन वाद्य यंत्र जो पहले मिटटी से बनाया जाता है परन्तु अब इसे लकड़ी के खोल से बनाया जाता है।इसका आकर ढोलक की तरह होता है। जिसके दोंनो तरफ बकरे के खाल को मढ़ा जाता है। और उसे हाथों के थाप जाता है।

भेर

सारंगगढ़ क्षेत्र में भेर का उपयोग होता है – ये मांगलिक कार्य में, शादी विवाह में, पूजा-अर्चना हो रहा है, मेले में देव पूजा हो रहा है, उस समय उस स्थान को शुद्धिकरण के लिये ये प्रयोग करते हैं। बिगुल जैसे इनका आवाज़ होता है। और इनको मुँह से फुककर बजाते हैं। पाँच फिट की लम्बी पाइप जैसे, लोहे की चादर से बनी होती है। सामने के तरफ चोगा के जैसे होता है। इसको मुँह से फुंककर बजाया जाता है।

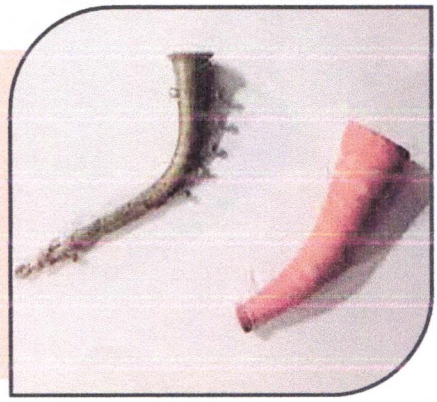

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)

CVRU

विद्या परं देवताम्

DR. C.V.RAMAN UNIVERSITY

डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय

करगी रोड, कोटा, जिला- बिलासपुर (छ.ग.)

Dr. C.V. Raman University
Registrar
Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)